श्री शान्ति सरोवर

कृत

वेदान्त केसरी श्री स्वामी हेमराज जी

चिदाकाशी



प्रकाशक

श्री सत्य धर्म मण्डल (रजि.)

कार्यालय :
२५४२ दरियागंज,
दिल्ली-६

सत्य धर्म मन्दिर
स्वामी हेमराज मिशन मार्ग,
७/५ पूर्वी पटेल नगर, नई दिल्ली-८

प्रकाशक :
सत्य धर्म मन्दिर,
७/५ पूर्वी पटेल नगर,
नई दिल्ली-८

श्री स्वामी हेमराज जयन्ती : १६६६

मूल्य : २-५०
हिन्दी का द्वितीय संस्करण १०००

मुद्रक :
कृष्ण प्रिंटिंग प्रेस,
४०३६, चावड़ी बाजार,
देहली-६

श्री गुरुदेव के चरणों में

सन् १९३४ में प्रातः स्मरणीय स्वनामधन्य परमहंस श्री गुरुदेव स्वामी परमानन्द जी महाराज चिदाकाशी के ब्रह्मलीन होने के पश्चात् विशेषरूप से सत्यधर्म मन्दिर सदाचार आश्रम, चिदाकाशी बीविंग फैक्टरी और दो आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय की स्थापना लारकाना, सिन्ध, में की गई। इस सत्संग की कई शाखायें स्थापित हुई और सत्संग तथा चिकित्सा आदि की सेवा सन् १९४७ तक नितन्तर जारी रही।

विभाजन के पश्चात् यह सेवक अक्टूबर १४, १९४७ को दिल्ली में आकर दरियागंज थिथत एक किराये के मकान में रहा। विस्थापित बन्धुओं की ६ वर्ष निरन्तर सेवा के साथ २ गुरु आज्ञानुसार पूर्ववत् सत्संग तथा औषधालय की सेवा भी आरम्भ करदी गई प्रेमीगण इससे लाभान्वित होते रहे। २१ सितम्बर, १९५१ को "चिदाकाशी सत्यधर्म मन्दिर" पूर्वी पटेल नगर में ७२ हजार रु० की लागत से तैयार हो गया।

इस मन्दिर का महूर्त्त बड़े गुरुदेव जी के शतवर्षीय जन्म तिथि २१ सितम्बर १९५१ को श्री अवधूत श्री स्वामी गुरुचरण दास जी महाराज के सभापतित्व में श्री एन० वी० गाडगिल मन्त्री (C.P.W.D.) ने किया और आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय का उद्घाटन श्री अवधूत जी महाराज की छत्र छाया में श्री अनन्त शयनम आय्यंगर अध्यक्ष लोक सभा (पार्लियामेंट

स्पीकर) और पुनर्वास मन्त्री माननीय श्री अजीत प्रसाद जैन ने २३ सितम्बर १९५१ को किया।

यह महोत्सव सदा की भांति बड़ी धूम-धाम से ३ दिन तक मनाया गया। दैनिक सत्संग, जो नित्य नियम से दरियागंज में होता था, अब सत्य धर्म मन्दिर में होने लगा और तब से प्रातः सायं यहां ही अखण्डरूप से होता चला आ रहा है और साथ ही प्रातः सायं औषधालय द्वारा रोगियों की चिकित्सा भी होती आ रही है।

इस सत्संग के प्रारम्भ और अन्त में प्रायः "श्री शान्ति सरोवर" के ही मनोहर भजन गाये जाते हैं। यह पुस्तक प्रथम ८१ वर्ष पूर्व छपी थी। यह इसका छठा संस्करण है। इस पुस्तक की एक एक पौरी मन को प्रेम-विभोर करके आत्म हिंडोले में झुलातीं है।

बहुत से भारत के ऐसे सत्संग-स्थान हैं जहां प्रेमीजनों द्वारा ये भजन बिना किसी भेदभाव के आत्म विभोर हो अपनी अन्तरात्मा से गाए बजाए जाते हैं। स्वनामधन्य ब्रह्मलीन श्री स्वामी रामतीर्थ जी महाराज को जब यह पुस्तक मिली तो उन्होंने इसे अपने अंग-संग रख लिया और अपने भजन संग्रह 'राम वर्षा' में भी इस शान्ति सरोवर के कई भजनों को स्थान दिया है। इसी तरह गोस्वामी श्री गणेशदत्त जी महाराज जो सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्राण थे, उन्होंने तो इस पुस्तक को अपने झोले में ऐसा संभाल कर रखा

था कि अन्य सब प्रकार की पुस्तकों से उपेक्षा उन्हें स्वीकार थी परन्तु इस गुटके को कभी उन्होंने उपेक्षा से देखकर अलग नहीं किया। जब देखो, तब ये

"वाह वाह इश्क मेरे घर आया है,
थय्या थय्या नाच नचाया है"

अथवा

"बिसर गई सब जग चतुराई,
जब ते आत्म स्थिति पाई।

के शब्दों को ही गुनगुनाते रहते थे।

भजनों की शैली अति सरल और सरस होते हुए भी भाव गम्भीर हैं ये देह भावना तथा विषयासक्ति की दल-दल से क्षणभर में ही निकाल कर निश्चल चित्त के स्थिर सिंहासन पर विराजमान कर देते हैं। गुरुदेव के इस गुटके की यहां भी प्रेमी जन निरन्तर माँग करने लगे, अतः हमने अप्रैल सन् १९५६ में इसे पुनः संशोधित कर छपवाया और प्रेमियों के समक्ष रखा। वह संस्करण भी कई वर्षों से समाप्त था और प्रेमियों की मांग बराबर बढ़ती रही। इधर कागज के दाम, छपाई, जिल्द बंदी आदि के मूल्य बहुत बढ़ जाने से आर्थिक कठिनाई भी सामने आकर खड़ी हुई। परन्तु और कोई उचित मार्ग न होने के कारण कुछ पैसा उधार लेकर इसको पुनः छपवाने का निश्चय कर लिया। अतः आज यह द्वितीय संस्करण पूज्य बड़े गुरुदेव की ११९ वीं जयन्ती के पुनीत अवसर पर जनता-जनार्दन के सामने भेंट कर हमें बड़ी प्रसन्नता हो रही है।

अन्त में यह सेवक प्रातः स्मरणीय सत् श्री महाराज स्वामी हेमराज जी के प्रमुख विरक्त शिष्य परमहंस श्री सतगुरु देव महाराज स्वामी परमानन्द जी चिदाकाशी जिनके श्री चरणों में इस सेवक को शरणागति प्राप्त हुई, और सेवा तथा नाम के साथ ज्ञान-दान मिला एवं जिन्होंने भविष्य में इस मिशन को चलाने की जिम्मेवारी सौंपी, उन श्री चरणों में ही यह पुस्तक भेंट करता हूँ—

"त्वदीयं वस्तु गोविंद तुभ्यमेव समर्पयामि"।

अर्थात्—तेरा तुझको सौंपते क्या लागे है मोर,
मेरा मुझ में कुछ नहीं जो कुछ है सब तोर।

आश्विन कृष्णा षष्ठी सम्वत् २०२६, चरण रज
स्वामी हेमराज जयन्ती, चेतनानन्द चिदाकाशी
अ० भा० शुद्धाहार तथा वेदान्त सम्मेलन,
१ अक्टूबर, १९६९.

सत्य धर्म मन्दिर (रजि०)
स्वामी हेमराज मिशन मार्ग, ७/५ पूर्वी पटेल नगर, दिल्ली-८

"अनुक्रमणिका"

—:o:—

❁ ओ३म् ❁

मंगलाचरण

ॐ तत् सत् ब्रह्म अज,
अचल अनाम अरूप ।
अगम अपार अखण्ड एक,
सत्-चित् आनन्द रूप ॥१॥

सतगुरु पूरण ब्रह्म को,
बारम्बार प्रणाम ।
जांके अनुभव ते लख्यो,
सर्वात्म सुख धाम ॥२॥

सर्वात्म को वन्दना,
नमस्कार सर्वंग ।
जांके बोध प्रकाश ते,
अनुभव उदय अभंग ॥३॥

अनुभव अबिध अगाध के,
शब्द तरङ्ग अनूप ।
अक्षर मात्रा अर्थ सब,
केवल अनुभव रूप ॥४॥

परसत ही अनुभव लहे,
संशय तिमिर नसाई ।
शान्ति पायई तृप्ति गहे,
परमानन्द समाई ॥५॥
भक्ति ज्ञान वैराग्य को,
शान्ति महा फल जान ।
शान्ति बिना जेतक करम,
सगरे निष्फल मान ॥६॥
तांते श्रद्धा सहित हो,
शान्ति सरोवर न्हाय ।
भक्ति ज्ञान वैराग्य को,
सहजे ही फल पाय ॥७॥
सर्वातम हित ते कियो,
शान्ति सरोवर ग्रन्थ ।
पढ़े सुने जो प्रीत सों,
लहे मोक्ष को पन्थ ॥८॥
घाट भिन्न भिन्न जास में,
पौड़ी घाटन मांहि ।
जो परसे जिस घाट को,
शान्ति अमी रस पांहि ॥९॥
प्रेम-युक्त एकाग्र हो,

जो नर स्वर सों गाय ।
बोध लहे शान्ति गहे,
ब्रह्मानन्द समाय ॥१०॥

विद्या की प्रभुता नहीं,
कविता का नहीं मान ।
साधारण भाषा लिखी,
अनुभव बोध प्रमान ॥११॥

बारम्बार प्रणाम मम,
हे प्रभु दीन दयाल ।
जग बन्धन सब काट के,
हेमाँ करो निहाल ॥१२॥

नमस्कार दण्डवोत मम,
हे प्रभु सर्व आधार ।
शान्ति पदारथ दीजिए,
हेमाँ करुणाधार ॥१३॥

नमो नमो परमातमा,
पूरण पुरुष अपार ।
सफल करो मम वचन को,
हेमाँ शरण तिहार ॥१४॥

वेदान्त केसरी सत् श्री १०८ स्वामी हेमराज जी चिदाकाशी



सत्य धर्म मन्दिर, स्वामी हेमराज मिशन मार्ग,
७/५ पूर्वी पटेल नगर, नई दिल्ली-८



अथ

श्री शान्ति सरोवर प्रारम्भ

मंगल घाट ॥१॥

पौरी ॥१॥

प्रभु[1] निर्गुण[2] निरङ्कारा ॥१॥ रहाउ ।

अजूनी[3] पुरुष पुरुषोत्तम[4],
निरंजन[5] देव[6] आधारा ॥२॥
निरामय[7] निर्विकार आतम[8],
सदा इक रूप इक सारा ॥३॥
सदा अद्वैत अविनाशी,
अजन्मा एक ऊँकारा ॥४॥
सर्व में सर्व से सूना,
सर्व सा सर्व आधारा ॥५॥

---

(१) निरपेक्षक व्यापक परमात्मा । गुण से रहित । (३) जन्म से शून्य । (४) विष्णु । (५) तेजोमय पारब्रह्म, माया से रहित । (६) प्रकाशवान । (७) दुख सम्बन्ध से रहित । (८) विकार शून्य ।

परम आनन्द परमातम,
परम किरपाल अति प्यारा ॥६॥
अमल[1] अक्रिय[2] अकाल अव्यय[3],
अगम[4] अव्यक्त[5] आपारा ॥७॥
त्रिकाला बाध[6] नित सूक्ष्म,
अगोचर[7] रहित आकारा ॥८॥
स्वयं परकाश[8] सुविलासी,
स्वयं स्थित[9] स्वआधारा[10] ६॥
अचल निर्भय अखण्ड[11] अविगत[12],
चिदाकाशी[13] निराकारा ॥१०॥
असंग[14] चेतन परिपूरण,
अलख केवल निराधारा ॥११॥
अनामय[15] शुद्ध स्वयं ज्योति,
करे हेमाँ नमस्कारा ॥१२॥

---

(१) मल से रहित (२) क्रिया से रहित (३) अविनाशी (४) मन चित्त बुद्धि की गम्य से परे (५) आकार से शून्य (६) तीनों कालों में सत्य (७) इन्द्रियों से परे (८) अपने प्रकाश से प्रकाश-मान (९) आप में आप स्थित (१०) अपने आश्रय आप (११) एक रस, भाग से रहित (१२) कल्पना से रहित (१३) चेतन आकाश (१४) सजातीय, विजातीय स्वगत भेद रहित, न्यारा १५ रोग और क्लेश से रहित।

पौरी ॥२॥

नमस्ते सर्व आधारा ॥१॥ रहाउ ।

नमस्ते आदि ते सूना,
नमस्ते अन्त ते न्यारा ॥२॥
नमस्ते निर्विकार आतम,
नमस्ते रहित आकारा ॥३॥
नमस्ते भक्त हितकारी,
नमस्ते सर्व का प्यारा ॥४॥
नमस्ते सर्व में पूरण,
नमस्ते सर्व उजियारा[1] ॥५॥
नमस्ते सर्व रूपाए,
नमस्ते सर्व आकारा ॥६॥
नमस्ते सर्व दुःख भंजन[2],
नमस्ते सर्व दातारा ॥७॥
नमस्ते शुद्ध स्वयं ज्योति,
नमस्ते एक ओंकारा ॥८॥

(१) प्रकाशक (२) दुख नाश करने वाला ।

नमस्ते पुरुष पुरुषोत्तम[1],
नमस्ते सर्व बिस्तारा ॥६॥
नमस्ते ज्ञान के दाता,
नमस्ते सत्य कर्तारा ॥१०॥
नमस्ते सर्व ते उत्तम,
नमस्ते प्राण आधारा ॥११॥
नमस्ते एक अविनाशी,
नमस्ते प्रभु निरंकारा ॥१२॥
नमस्ते धरन के धारी,
नमस्ते सर्व प्रतिपारा ॥१३॥
नमस्ते स्वतः परकाशी,
नमस्ते रहित आधारा ॥१४॥
नमस्ते सुख भवन[2] स्वामी,
नमस्ते परम किरपारा ॥१५॥
नमस्ते सर्व के द्रष्टा,
नमस्ते ज्ञान उजियारा ॥१६॥
नमस्ते सर्व के ईश्वर,
नमस्ते सर्व रखवारा ॥१७॥

(१) परमात्मा (२) आधार ।

नमस्ते सर्व के अन्तर,
नमस्ते सर्व ते न्यारा ॥१८॥
नमस्ते मुक्ति के दाता,
नमस्ते निज अमल सारा[1] ॥१६॥
अचल निर्गुण अकाल अद्वै,
अगम अवगत निराकारा ॥२०॥
करे हेम्माँ नमस्कारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥२१॥

पौरी ॥३॥

प्रभु निर्गुण निरंकारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥१॥ रहाउ ।

अजूनी सर्व आधारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥२॥
अकाल अव्यय निराकारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥३॥
परम पावन[2] परम सारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥४॥

(१) तत्वस्वरूप (२) पवित्र ।

अनामय एक ओंकारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥५॥
निरंजन सत्य कर्तारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥६॥
अमल निजरूप विस्तारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥७॥
परम किरपाल रखवारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥८॥
जगत प्रतिपाल हितकारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥९॥
परम ज्योति निराधारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥१०॥
अचल अक्रिय निरंकारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥११॥
सर्व आतम सर्व प्यारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥१२॥
सर्व में सर्व ते न्यारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥१३॥

परम परकाश उजियारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥१४॥
अलौकिक[1] रहित आकारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥१५॥
जगत गुरुदेव दातारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥१६॥
अगम अविगत निराकारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥१७॥
सर्व गुण मूल कर्तारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥१८॥
अलख ओंकार चिद्सारा[2],
नमस्कारा नमस्कारा ॥१९॥
सर्वमय प्राण आधारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥२०॥
अच्युत[3] अव्यय अखंड आतम,
निरामय[4] शुद्ध अविकारा ॥२१॥
करे हेमाँ नमस्कारा,
नमस्कारा नमस्कारा ॥२२॥

(१) दृष्टि से रहित, लोक कल्पना से रहित (२) चैतन स्वरूप (३) आरम्भ परिणाम से रहित, एक रस (४) दुःख से रहित ।

पौरी ॥४॥

नमो शिवरूप अविनाशी ॥१॥ रहाउ ।

नमो अक्रिय नमो अविगत,
नमो पूरण चिदाकाशी ॥२॥
नमो ओंकार परमातम,
नमो सुखरूप सुखराशी[1] ॥३॥
नमो ईश्वर नमो व्यापक,
नमो कर्ता सर्ववासी ॥४॥
नमो किरपाल कृपानिधि,
नमो गुणमूल भयनाशी ॥५॥
नमो केवल अखण्ड आतम,
नमो अनुभव[2] स्वपरकाशी ॥६॥
नमो निरगुण निराकारा,
नमो सत्पुरुष सत्भाषी ॥७॥
नमो चिद्रूप चिद्सारं[3],
नमो कूटस्थ[4] सुविलासी ॥८॥

(१) सुख की खान। २ ज्ञान स्वरूप। (३) चैतन मात्र। (४) अहिरन की भांति स्थित।

नमो गोविंद दुःखभंजन,
नमो गोपाल अविनाशी ॥९॥
नमो स्वामी परम पावन,
नमो महाकाल भवनाशी ॥१०॥
नमो सर्वज्ञ सर्वोतम,
नमो घटघट के परकाशी ॥११॥
नमो महादेव सुखदाता,
नमो महाभूत सुखराशी ॥१२॥
नमो परब्रह्म आधारा,
नमो महातेज परकाशी ॥१३॥
नमो अन्तर नमो बाहिर,
नमो पूरण महाकाशी ॥१४॥
नमो अक्षर[1] अमल निर्भय,
नमो साक्षी सुपरकाशी ॥१५॥
नमो करुणाभवन[2] स्वामी,
नमो गुरुदेव दुःखनाशी ॥१६॥
प्रभु निरगुण निरंकारा,
अचल इक रूप अविनाशी ॥१७॥
नमस्कारं नमस्कारं,
करे हेमाँ चिदाकाशी ॥१८॥

(१) अविनाशी (२) क्षमा, (कृपा सदन)

ब्रह्म महिमा घाट ॥ २ ॥

पौरी ॥१॥

अलख[1] ओंकार[2] अविनाशी ॥१॥ रहाउ ।

तू ही अव्वल तू ही आख़िर,
तू ही मध्यकाल के वासी ॥२॥
तू ही ज़ाहिर तू ही बातिन,
तू ही घट घट के परकाशी ॥३॥
तू ही माता पिता जग को,
तू ही गुरुदेव सुखराशी ॥४॥
तू ही अविगत अचल अक्रिय,
तू ही सूक्ष्म चिदाकाशी ॥५॥
निरंजन पुरुष परमातम,
परम कृपाल कृपाशी ॥६॥
अग्नि में तेज जल में रस,
पवन में शक्ति फुरनाशी ॥७॥
धरणि[3] में शक्ति धारन नाशी[4],
व्यापक नभ[5] में आकाशी ॥८॥

---

(१) बुद्धि की लक्षणा से रहित (२) परमात्मा पर ब्रह्म (३) पृथ्वी (४) आधार रूप (५) आकाश ।

तू ही स्वामी तू ही ईश्वर,
तू ही ठाकुर सरववासी ॥९॥
तू ही ओंकार परिपूरण,
तू ही निर्लेप अविनाशी ॥१०॥
सर्व घट में सर्व हृद में,
तेरा परकाश परकाशी ॥११॥
स्वयं[1] ज्योति स्वयं स्थित,
स्वयं[2] भासी स्वपरकाशी ॥१२॥
अजूनी निर्विकारातम,
निरामय सर्व दुःखनाशी ॥१३॥
वर्ण[3] अरु चिन्ह ते सूना,
न वस्तु काल देसासी[4] ॥१४॥
खुले दृग[5] ज्ञान के जब ही,
तू ही तू हो के परकाशी ॥१५॥
मगन हो ज्ञान में हेमाँ,
हुआ नासी से अविनाशी ॥१६॥

—:०:—

(१, २) अपने प्रकाश द्वारा प्रकाशमान (३) रंग (४) देश (५) नेत्र।

पौरी ॥२॥

तेरा अन्त न पारावारा ॥१॥ रहाउ ।

तू बेअन्त अनादि[1] निरंजन,
रूप न रेख अकारा ॥२।
तू आहौं तू है तू होसी,
पूरण पुरुष अपारा ॥३॥
तू कर्ता[2], धर्ता[3], हर्ता, प्रभु,
तेरा सकल पसारा ॥४॥
तू घटघट वासी सद अविनाशी,
तू सब का रखवारा ॥५॥
तू किरपाल दयाल स्वामी,
तू प्रीतम अति प्यारा ॥६॥
तू सर्वज्ञ सर्व दुःख भंजन,
तू सब का आधारा ॥७॥
तू अन्तर तू बाहिर पूरण,
तू सब कुछ विस्तारा ॥८॥
तू निर्गुण परमातम अक्रिय,
परम ज्योति निजसारा ॥९॥

(१) आदि से रहित। (२) धारने वाला। (३) नाश करने वाला।

धरणि[1] उपाय सृष्टि सब साजी[2],
चन्द्र सूर्य उजियारा ॥१०॥
नीर[3] बहाय कृपा अति कीन्ही,
फल-फुल बहु विस्तारा ॥११॥
वायु साज जगत को थाम्यो,
अचरज खेल तुम्हारा ॥१२॥
प्राण सहारे देह चलायो,
वाह प्रभु प्राण आधारा ॥१३॥
बड़वा[4] अग्नि सुखावे जल को,
सागर नीर मंझारा ॥१४॥
जठराअग्नि उदर के भीतर,
अन्न का सार निकारा ॥१५॥
दे अवकाश अकाश पसार्यो,
रचियो सब संसारा ॥१६॥
कथ कथ थाके बहु-विधि स्याने,
मूल न पायो पारा ॥१७॥
सब में व्यापक होय विराजें,
सब से रहित न्यारा ॥१८॥

(१) पृथ्वी (२) उत्पत्ति करके संवारी (३) जल (४) वह अग्नि जो समुद्र में स्थित है।

कोई न जाने तेरी लीला,
तू बेअन्त अपारा ॥१६॥
तेरी गति मति तू ही जानें,
हे प्रभु दीन दयाला ॥२०॥
पेख पेख हेस्मा मगनाना,
अद्भुत चोज तुम्हारा ॥२१॥

पौरी ॥३॥

तेरा अन्त न किनहूं पायो ॥१॥ रहाउ ।

तू बेअन्त अपार सुवामी,
अलख निरंजन रायो ॥२॥
शेष[1] महेश[2] गणेश[3] धनेशहिं[4],
शारद[5] अन्त न आयो ॥३॥
इन्द्र[6] मुनिंद्र[7] उपिंद्र[8] न जान्यो,
ब्रह्मे पार न पायो ॥४॥

(१) सांपों का राजा, जो महा विद्वान है और नित्य-प्रति सहस्त्र नाम ईश्वर के लेता है (२) महादेव (३) शिवजी का बेटा (४) कुबेर (५) सरस्वती (६) देवताओं का राजा। (७) श्रेष्ठ मुनि। (८) विष्णु।

वायु[1] अग्नि[2] आदित[3] अंग्रा[4],
बहु विधि भाख सुनायो ॥५॥
जैमुनि[5] व्यास[6] कपिलमुनि[7] गौतम[8],
पातंजलि[9] गुण गायो ॥६॥
नारद[10] मनु[11] वशिष्ठ[12] पराशर[13],
याज्ञवल्क्य[14] बहु ध्यायो ॥७॥
भारद्वाज[15] पुलस्त[16] पुलह[17] भृगु[18],
अत्रि[19] भेद न पायो ॥८॥
वाल्मीकि शंकर आचार्य,
रामानन्द विलायो ॥९॥
नानक भक्त कबीर त्रिलोचन,
नामदेव चित्त लायो ॥१०॥
तुलसीदास मीरां कर्मां हूँ,
रविदासे सुख पायो ॥११॥

(१, २, ३, ४) चार ऋषियों के नाम जिन्होंने वेद रचे हैं। ५) मुनि विशेष, वेद व्यास का शिष्य और उत्तर-मीमांसा के रचीयता (६) वेदांत का कर्त्ता (७) योग शास्त्र का कर्त्ता (८) सांख्य-शास्त्र का कर्त्ता (९) न्याय शास्त्र का कर्त्ता (१०) श्रेष्ठ मुनि (११) धर्म शास्त्र का कर्त्ता (१२, १३, १४) श्रेष्ठ मुनि, शास्त्र कर्त्ता, तत्वज्ञ (१५, १६, १७, १८, १९) श्रेष्ठ मुनि।

योगी[1] यति[2] तपी[3] पचहारे[4],
पंडित भूपति[5] गायो ॥१२॥
अगम अगोचर निर्गुण पूरण,
संतन[6] के मन भायो ॥१३॥
लीन भयो हेमाँ गुण गावत,
अचरज[7] रूप समायो ॥१४॥

पौरी ॥४॥

तू घटघट व्यापक साचा साहिब,
तेरा अन्त न पाया ॥१॥ रहाउ ।

तेरा चोज[8] तेरी बड़ियाई,
तेरा कीता भाया ॥२॥
तू अन्तर तू बाहिर पूरण,
तू प्रभु सर्व समाया ॥३॥
तू समरथ सर्व हृदयंगम[9],
हेमाँ लख बिगसाया[10] ॥४॥

(१) प्राणायाम करने वाले (२) त्यागी सन्यासी (३) हठ द्वारा इन्द्रियों का सयम करने वाले (४) पुरषार्थ करते करते थक गए (५) पृथ्वी के राजा (६) शान्त-आत्मा (७) वाणी से अगोचर (८) खेल (९) प्यारा (१०) आनन्द में आया।

पौरी ॥५॥

प्रभु जी सब तेरा पासारा ॥१॥ रहाउ ।

नाना रूप धरे जो स्वांगी,
सब में सब से न्यारा ॥२॥
मारुत[1] व्योम[2] धरिण[3] जल अग्नि,
सूर्य चंद अरु तारा ॥३॥
कहुं अण्डज[4] कहुं जेरज[5] स्वेदज[6],
कहुं उद्भुज[7] आकारा ॥४॥
कहुं कारण[8] कहुँ कारज[9] भासे,
अन्त न पारावारा ॥५॥
कहुँ पूजक[10] कहुँ पूज्य[11] विराजे,
अद्भुत[12] खेल तुम्हारा ॥६॥
कहुँ देवा[13] कहुँ राक्षस[14] मानुष[15],
ऊँच नीच विस्तारा ॥७॥

---

(१) पवन (२) आकाश (३) पृथ्वी (४) अण्डों से उत्पन्न होने वाले (५) इन्द्रियों से उत्पन्न होने वाले (६) पसीना अथवा मल से उत्पन्न होने वाले (७) पृथ्वी का पेट फाड़कर बाहर जाने वाले (८) उत्पन्न करने वाले (९) उत्पन्न होने वाले (१०) पूजा करने वाले (११) पूजा होने योग्य अर्थात जिसकी पूजा हो (१२) आश्चर्य (१३) सात्विक सृष्टि (१४) तामस सृष्टि (१५) राजस सृष्टि ।

अपना चोज आप ही देखें,
आप करें निरवारा ॥८॥
अपनी कला आप प्रगटाई,
आपे पेखन हारा ॥९॥
तुझ बिन दूसर हुआ न होगा,
हेमाँ सद् बलिहारा ॥१०॥

पौरी ॥६॥

प्रभु जी मैं तेरे बलिहारी ॥१॥ रहाउ ।

शीश अकाश चरण पाताले,
दस दिश भुजा तुम्हारी ॥२॥
सूर्य चंद द्वै नैन प्रकाशें,
तारन की छबि न्यारी ॥३॥
कटि[1] धरती पर्वत सब अस्थि[2],
रोम वृक्ष नदि[3] नारी ॥४॥
उदर[4] अन्तरिक्ष[5] शोभत नीको,
जामे रचना धारी ॥५॥
अण्डज जेरज स्वेदज उद्भुज,
सगरे उदर मंझारी[6] ॥६॥

(१) कमर (२) हड्डियाँ (३) नदियाँ (४) पेट (५) पृथ्वी (६) मध्य बीच ।

मुख अग्नि सब देवा इन्द्रिय,
अद्भुत कला पसारी ॥७॥
एक अखण्ड अचल पुरुषोत्तम,
आदि पुरुष[1] भवधारी[2] ॥८॥
नित नूतन पूरण आनन्दी,
मंगल रूप बिहारी[3] ॥९॥
आदि अन्त ते रहित विराजे,
हेमाँ सद्सद् वारी[4] ॥१०॥

पौरी ॥७॥

तेरा चोज मेरे मन भाया ॥१॥ रहाउ ।

तू समरथ सर्व आधारा,
अलख निरंजन राया ॥२॥
तू घटघट व्यापक साचा साहिब,
अन्त न किनहूँ पाया ॥३॥
तंबू वांग अकाश पसारयो,
सूर्य चंद्र चढ़ाया ॥४॥
निश बासर के चक्कर ऊपर,
यह संसार नचाया ॥५॥

(१) विराट (२) जगत के धारने वाला (३) प्रिय प्रीतम (४) बलिहारी, कुरबान।

धरती का कालीन[1] बिछाया,
ऊपर पवन चलाया ॥६॥
बादल से पानी बरसाकर,
जल परवाह बहाया ॥७॥
नाना फूल वृक्ष अरु तृण[2] कर,
पृथ्वी तल[3] शोभाया ॥८॥
रात समय तारन की छबिकर,
सब का मन परचाया ॥९॥
भांति भांति की औषधि रचकर,
तन का रोग मिटाया ॥१०॥
शक्ति पसार करी क्रीड़ा[4] सब,
अद्भुत खेल रचाया ॥११॥
खेल दिखाय भ्रमायो सब जग,
अपना आप छिपाया ॥१२॥
ज्ञान भयो बूझयो परमातम,
हेमाँ जगत भुलाया ॥१३॥

—:o:—

(१) गलीचा (२) घास (३) तल या सतह (४) खेल ।

प्रार्थना घाट ॥ ३ ॥

पौरी ॥१॥

प्रभु जी तू मेरा रखवारा ॥१॥ रहाउ ।

तू प्रतिपाल दयाल कृपानिधि,
तू प्रभु प्राण आधारा ॥२॥
तू स्वामी तू अन्तर्यामी,
तू प्रीतम तू प्यारा ॥३॥
तू आहो तू है तू होसी,
तू प्रभु सिरजनहारा[1] ॥४॥
तू दुःख भंजन[2] नित्य निरंजन,
सूक्ष्म रहित अकारा ॥५॥
तू कर्ता भर्ता[3] हर्ता प्रभु,
तू निर्गुण करतारा ॥६॥
तू अन्तर तू बाहिर पूरण,
तू घट घट विस्तारा ॥७॥
तू बेअन्त अकाल अजूनी,
अगम अनाम[4] अपारा[5] ॥८॥

उत्पत्ति करने वाला (२) दुःखों का नाश करने वाला (३) पालना करने वाला (४) नाम की कल्पना से रहित (५) पार और वार से रहित ।

तू उत्तर तू दक्षिण पश्चिम,
तू पूरव उजियारा ॥९॥
तेरी आस भरोसा तेरा,
तेरा मान सहारा ॥१०॥
तेरा ध्यान धरूँ निशि-बासर,
हे प्रभु दीन दयारा ॥११॥
नमस्कार मेरा तुझ ही को,
हे प्रभु सर्व अधारा ॥१२॥
काम क्रोध मत्सर[1] पर-निंदा,
हरो[2] समग्र[3] विकारा ॥१३॥
हाथ दे राखो विषयन से,
हे प्रभु परम कृपारा ॥१४॥
निमख[4] न विसरो चित मेरे से,
हे चिद्घन[5] चिद्सारा[6] ॥१५॥
मगन[7] करो आतम सुख मांही,
भूले सब संसारा ॥१६॥
नमो नमो प्रभु अन्तर्यामी,
नमो नमो कर्तारा ॥१७॥

(१) सूक्ष्म अहंकार (२) नाश करो (३) सकल, सारे (४) नेत्रों की पलक मात्र (५) चेतन मात्र (६) चैतन्य तत्व (७) स्थिर करो, विश्राम करो।

बालक जान गहो हाथन ते,
राखो नित्य सँभारा ॥१८॥
तू मेरा रच्छक प्रतिपालक,
तू मेरा दातारा ॥१९॥
तू मेरा स्वामी परमेश्वर,
तू मेरा आधारा ॥२०॥
सदा बिराजो मेरे अन्तर,
सत्[1] चित्[2] आनन्द[3] सारा[4] ॥२१॥
चोज करो घट घट के मांही,
रूप न रेख अकारा ॥२२॥
सत्य-स्वरूप अजन्मा निर्भय,
हेमाँ वंदन हारा ॥२३॥



(१) तीनों कालों में रहने वाले (२) अपने आप को जानने वाले और दूसरों को प्रकाशित करने वाले (३) दुःख सम्बन्ध से रहित, आप में आप स्थिर (४) तत्व-स्वरूप ।

वैराग्य घाट ॥४॥

पौरी ॥१॥

प्राणी[1] मन में बैठ विचार ॥१॥ रहाउ ।

कांको मात-पिता सुत कांको,
सब स्वारथ[2] के यार ॥२॥
जीवत को सनबन्ध बन्यो है,
ज्यों स्वप्ना रैनार[3] ॥३॥
प्राण गए काया ते जब ही,
देत अगनि में जार ॥४॥
भस्म देख घर को उठ दौड़ें,
पाछे तिनका डार ॥५॥
अन्त बार कोई नहीं साथी,
बेटा बेटी नार ॥६॥
तांते इनकी प्रीत त्यागो,
अपना आप सँभार ॥७॥
कहे हेमाँ बिन आपा[4] चीने,
भव ते होत न पार ॥८॥

---

(१) हे प्राण धारी (२) अपने मतलब के मित्र (३) रात
(४) आत्मज्ञान ।

पौरी ॥२॥

दुनिया[1] नाम मकर[2] का साधो,
तिस से हाथ संगोरो[3]
अहि निशि आतम मांहि मगन हो
काम क्रोध की छोड़ो ॥१॥ रहाउ ।
माया जाल पदारथ चोगी,
फसियो जीव अज्ञानी,
साधु समागम तत्व विचारयो,
छूट्यो आतम ज्ञानी ॥२॥
क्या देखें क्या ढूंढे बौरे,
सब है धूर समाना,
स्वप्न सृष्टि ज्यों यह जग रचना,
तांका मर्म न जाना ॥३॥
दारा मीत पूत सम्बन्धी,
सब को हित धन केरा,
पूजे सेवें देखें पूछें,
सब मतलब का फेरा ॥४॥
निर्धन को कोई पूछे नाहीं,
मूरख जान निकालें,

(१) संसार, प्रपंच (२) छल या धोखा (३) चित को हटाओ ।

आए को आदर नहीं देवें,
दुःख ज्यों तांको टालें ॥५॥
साचे को झूठा कर जाने,
झूठे को सचियारा,
साधु वचन पर हांसी ठाने,
समझें दोष विकारा ॥६॥
छननी रीत जगत की देखी,
छान मैल आहारी,
गुण ग्राहक कोई विरला देख्या,
छाज रीति जिहँ धारी ॥७॥
जग मिथ्या को सच कर जान्यो,
उरझयो मध्य अज्ञाना,
धन जोड़न को दस दिशि धायो,
भटक्यो पशु समाना ॥८॥
कही बात को माने नाहीं,
मन मुखता उरझाने,
गर्दभ ज्यों हठ को नहीं त्यागें,
ममता में लिपटाने ॥९॥
दीन दयाल सर्व दुःख भंजन,
तांकी मर्म न जानी,

धन संपति गृह सुत बनिता में,
मन की प्रीति लगानी ॥१०॥
नाम रूप जग मिथ्या हैमाँ,
त्यागो ताहिं सुजाना,
सिमरो आदि पुरुष परमेश्वर,
सत्य रूप सामाना ॥११॥

पौरी ॥३॥

जग में सब स्वारथ के यार ॥१॥ रहाउ ।
माता ताता बेटा बेटी,
बहिन भाई अरु नार ॥२॥
जब लगि देखें स्वारथ निकसे,
तब लग सब का प्यार ॥३॥
जब देखें स्वारथ नहीं निकसे,
कोई न पूछे सार ॥४॥
धनवन्ता बेटा घर आवे,
बोलत जय जयकार ॥५॥
निर्धन को आदर नहीं देवे,
सिर में डारत छार ॥६॥
जब लग तेरे पास रुपैया,
सब कोई तेरा यार ॥७॥

निर्धन के कोई निकट न आवे,
यह रीति संसार ॥८॥
जब लग तेरे घट में श्वासा,
तब लग नामाचार ॥९॥
स्वास गये काया कुमलानी,
घर से देत निकार ॥१०॥
क्या तू करता मेरा मेरा,
तेरा कौन विचार ॥११॥
कहे हेमाँ तज प्रीत जगत की,
अपना आप सँभार ॥१२॥

—:o:—

पौरी ॥४॥

सब जग बाँध्यो माया जाल[1] ॥१॥ रहाउ ।

अर्थ[2] चोग पर कपि[3] ज्यों फांदत,
परमारथ[4] न संभाल ॥२॥
रात दिवस भटकत ही डोलें,
ज्यों बन को बैताल ॥३॥

(१) अज्ञान, मोह (२) विषय और विषय भोग के साधन अर्थात स्त्री, पुत्र, धन आदि पदार्थ (३) बन्दर (४) सत्य ज्ञान।

देखा देखी पर सब भूले,
यौवन वृद्ध अरु बाल ॥४॥
मन नटवे ने बाजी पाई,
नाम रूप जंजाल ॥५॥
देख देख सब सृष्टि लुभानी,
बिसर गया गोपाल ॥६॥
साधु समागम कल्पित जाने,
सगरो माया जाल ॥७॥
तत्व विचार परम्-पद पावे,
हेमाँ होत निहाल[1] ॥८॥

—:o:—

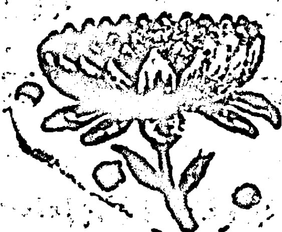
पौरी ॥५॥

साधो धन की प्रीति त्यागो ॥१॥ रहाउ ।

धार संतोष निकारो तृष्णा,
लोभ नींद से जागो ॥२॥
जो नर धन की बात चलावे,
तांते अहिनिशि भागो ॥३॥

(१) सब दुःखों का नाश करके परमानन्द अवस्था को पाता है।

धन को संच संच कर राखो,
धन है कारो नागो ॥४॥
जो जो सेवे विष फल लेवे,
काहे मन अनुरागो ॥५॥
थोड़ा होय तो काम चलावो,
बहुता होय तो त्यागो ॥६॥
धन की प्रीति ज्ञान की शत्रु,
तांते कर वैरागो ॥७॥
धन को पाय धनी अकड़ावे,
मूरख बड़ो अभागो ॥८॥
प्राण गए धन भयो परायो,
सब कोई लूटन लागो ॥९॥
धिक् जीवन धिक् धन को संचन,
धिक् पोषण धिक् रागो ॥१०॥
संतन को धन हरिहर नामा,
हेमाँ मन अनुरागो ॥११॥



पौरी ॥६॥

साधो मोह जैसी नहीं फाई ॥१॥ रहाउ ।

दानव[1] देव पशु नर पंखी,
सकली सृष्टि भ्रमाई ॥२॥
धन दारा गृह सुत संपति की,
अद्भुत जाल विछाई ॥३॥
जो जो आवे ताँहि फसावे,
खाली कोई न जाई ॥४॥
ज्यों ज्यों संग बढ़े आपस में,
त्यों त्यों मोह उपजाई ॥५॥
ज्यों ज्यों मोह बढ़े हृदयंतर,
त्यों त्यों बंधन पाई ॥६॥
जौं लौं संग रहे मित्रन का,
तौं लौं चित बिगसाई ॥७॥
मित्र गए चित कांपन लाग्यो,
छण छण शोक बढ़ाई ॥८॥

(१) असुर, दैत्य ।

जो जो बंधन बांधन हारे,
सब से मोह अधिकाई ॥९॥
चौदह भुवन[1] मोह की सेना,
मरकट[2] वांग नचाई ॥१०॥
मोह भुलाए पंडित भूपति,
भूली लोग लुगाई ॥११॥
मोह का वेग नदी का कप्पर,
गिरे सो गोते खाई ॥१२॥
मोह की धार खड़ग से तीच्ण,
जो छोवे सिर जाई ॥१३॥
जो चाहे मोहे शोक न व्यापे,
चित से नेह भुलाई ॥१४॥
जो नर नेह राम सों लावे,
सहिज मुक्ति हो जाई ॥१५॥
धार वैराग्य जगत रति त्यागी,
आतम रति[3] उपजाई ॥१६॥

(१) सात लोक ऊपर हैं और सात लोक नीचे हैं। ऊपर के सात लोक भू:भुवः स्वः मह; जन:तपा और सत हैं। नीचे के सात लोक अतल, वितल, ततल, रसातल, तलातल, महातल और पाताल हैं। (२) बन्दर (३) प्रीत।

सकल उपाधि मिटी सुख पाया,
सहिज समाधि लगाई ॥१७॥
सर्गातम दृष्टि धारे बिन,
मोह न जावे भाई ॥१८॥
मोह तियाग परम पद पाईए,
हेमाँ कहत बुझाई ॥१९॥

पौरी ॥७॥

साधो सब जग चल्लनहारा ॥१॥ रहाउ ।

श्वास श्वास पर आयु जावे,
समझे नाहिं गंवारा ॥२॥
देखत ही सब लोग विनाशें,
ज्यों परभाती तारा ॥३॥
इक विनसे इक स्थिर माने,
यह रीति संसारा ॥४॥
जाव संयोग बन्यो जग सारा,
छिन में बिछड़न हारा ॥५॥
आए अकेला जाए अकेला,
झूठा सकल पसारा ॥६॥
को काहू को वैरी कहिए,
को काहू को प्यारा ॥७॥

सब ने ऐथों चलना इक दिन,
बाज रह्या नक्कारा ॥८॥
हेमराज इस बिधि को रचना,
आप रची कर्तारा ॥९॥

पौरी ॥८॥

साधो क्रोध बड़ो दुःख दाई ॥१॥ रहाउ ।
पहले आग लगे मन अपने,
पाछे अवर जलाई ॥२॥
जो जो अवगुण अन्तर होवे,
सो सो प्रगट दिखाई ॥३॥
विष से अधिक क्रोध हत्यारा,
ऐसे बुद्धि समझाई ॥४॥
क्रोध अग्नि जां भड़के अंतर,
ज्ञान ध्यान बिसराई ॥५॥
क्रोधवान पंडित भी मूरख,
क्रोधी तपा कसाई ॥६॥
क्रोधी राजा न्याय न जाने,
रैयत मूल न भाई ॥७॥
क्रोधी जोगी जुगत न जाने,
बिरथा देह सुखाई ॥८॥

क्रोधी त्यागी दूर दूर भटके,
कहूं न आदर पाई ॥९॥
क्रोधी दाता अपयश पावे,
बिरथा माल गंवाई ॥१०॥
क्रोधी भक्त न शोभा पावे,
पच पच जन्म बिहाई[1] ॥११॥
क्रोधी गुरु की शिक्षा थोथी[2],
रंच न सुख उपजाई ॥१२॥
क्रोधी बेटा बाप न भावे,
क्रोधी सुता[3] न माई ॥१३॥
क्रोधी नार न चाहे भर्ता,
बोल कबोल[4] सुनाई ॥१४॥
क्रोधी कहूं न आदर पावे,
जित कित चोटां खाई ॥१५॥
क्रोधी हृदय तपे निशि-वासर,
ज्यों चूल्हा भड़काई ॥१६॥
आप दुःखे औरन दुःख देवे,
जिंहि घट क्रोध समाई ॥१७॥
व्यापक ब्रह्म अखण्ड विरजे,
क्रोधी बूझ न आई ॥१८॥

(१) व्यतीत करना (२) व्यर्थ (३) बेटी (४) दुरवचन ।

तांते क्रोध तियागो निशि दिन,
शांति सरोवर नहाई ॥१९॥
बिना विचार न धीरज आवे,
बार बार समुझाई ॥२०॥
आनन्द सिंधु समायो हेमाँ,
क्रोध अग्नि बिस्माई ॥२१॥

पौरी ॥६॥

मेरे मना जग ते होय उदास ॥१॥ रहाउ ।

ज़ल तरंगवत यह जग रचना,
छिन उपजे छिन नास ॥२॥
नाम रूप परपंच पसारो,
सकलो शब्द विलास ॥३॥
जो उपजे सो सकल विनाशे,
कांकी धरिए आस ॥४॥
सुन्दर काया देख न भूलो,
पल भर तांहि निवास ॥५॥
आवे जावे रहन न पावे,
ज्यों परदेसी श्वास ॥६॥
मूआ देख सभी उठ भागें,
कोई न आवे पास ॥७॥

जासों नेह बढ़े जग भीतर,
सो सो गल की फास ॥८॥
क्षण-भंगुर आनन्द विषय को,
विष ज्यों दुःख की रास ॥९॥
धार वैराग्य विचारो हेसाँ
आत्म स्वयं प्रकाश ॥१०॥

—:o:—

पौरी ॥१०॥

विषय रस त्यागो मेरे मीत ॥१॥ रहाउ ।

जहां जहां चित चितवे विषयन को,
बल कर तांको जीत ॥२॥
लोभ मोह माया ममता से,
छिन छिन रोघो[1] चीत ॥३॥
मलिन अहार अचार[2] त्यागो,
धारो निर्मल रीत ॥४॥
विषयानन्द असार बिनासी,
राग द्वेष को भीत[3] ॥५॥
ब्रह्मानन्द सार अविनाशी,
हेसाँ सुन्चो नीत ॥६॥

(१) रोको (२) कर्म, वर्ताव (३) आधार, या दीवार।

पौरी ॥११॥

साधो लोभ महा दुःख दाई ॥१॥ रहाउ ।

जब ही लोभ हृदय में आवे,
सत संतोष[1] गंवाई ॥२॥
लोभ निवास करे जाँ अन्तर,
पाप कुसत्य कमाई ॥३॥
ज्यों ज्यों लोभ हृदय में आवे,
त्यों त्यों मन पिघलाई ॥४॥
निशि-वासर विषयन की सेवा,
रुचि रुचि लोभ कराई ॥५॥
चोरी ठग्गी द्रोह बखीली,
वड्डी लोभ सिखाई ॥६॥
लोभी हृदय महा पापातम,
ज्यों त्यों धन उपजाई ॥७॥
लोभी राजा रैयत लूटे,
धर्म नियाय भुलाई ॥८॥
लोभी पंडित ज्ञान न जाने,
घर घर कथा सुनाई ॥९॥

(१) सर्व इच्छाओं के त्यागने से चित्त की एकाग्र अवस्था ।

लोभी साधु धन के कारण,
बहुविधि भेष बनाई ॥१०॥
लोभी बनिया पाप कमावे,
बिरथा जन्म गंवाई ॥११॥
लोभी दरदर चोटें खाए,
आदर मूल न पाई ॥१२॥
लोभ भ्रमाए बहुविधि स्याने,
मूरिख क्या बन आई ॥१३॥
चोग देख फसियों खग[1] मूरख,
मछली लोभ फंसाई ॥१४॥
लोभी नार त्यागे भर्ता,
जत सत धर्म गंवाई ॥१५॥
लोभी का परमेश्वर पैसा,
सिमर सिमर सुख पाई ॥१६॥
निशि-बासर धन ही को सिमरे,
लोभी राम न ध्याई ॥१७॥
मित्र ठगे पंथी को लूटे,
बहु विधि कपट कमाई ॥१८॥
चौदह भुवन मिलें लोभी को,
तौहूं शान्ति न पाई ॥१६॥

(१) पक्षी।

धन के कारण देव मनावे,
भूत पिशाच मनाई ॥२०॥
जे धन आवे सुख सों फूले,
जो नासे बिसमाई ॥२१॥
निशि-बासर धन की अभिलाषा,
लोभी हृदय जलाई ॥२२॥
जब लग जीवे धन को संचे,
अन्त समय पछुताई ॥२३॥
साथ न चाले कौड़ी पैसा,
पच पच जन्म विहाई ॥२४॥
संतन को मिल हरिधन संचो,
हेमाँ अन्त सहाई ॥२५॥

पौरी ॥१२॥

चरखा[1] फेर के बाँह उलार कुड़े
तू अपना दाज संवार कुड़े ॥१॥ रहाउ ।

सब सैयां मिल तिंञन[2] लाया,
तूँ भी तंद[3] निकार कुड़े ॥२॥

(१) शरीर, पुरुषार्थ करके अपना उद्धार कर (२) कई स्त्रियों का मिलकर चरखा चलाना । (३) चरखा फेर अर्थात ज्ञान के साधन सिद्धकर ।

कई सईयां दाज रंगाय गईयां,
हुण तूँ भी रंगण चाड़ कुड़े[1] ॥३॥
आसन मार के बहु विच सैया दे,
तूँ खेडण कुडण विसार[2] कुड़े ॥४॥
सब पांसों दृष्टि चुराय के तूँ,
कर कत्तण नाल प्यार कुड़े[3] ॥५॥
यह चरखा[4] छिन छिन नासी तेरा,
तू मन दा मान निवार कुड़े ॥६॥
इस वेरह्यों[5] इक दिन चलनाई,
तू मूल न पांव पसार कुड़े ॥७॥
कोई नाल न निभसी साथी संगी,
तू मन थीं सगल विसार कुड़े ॥८॥
मां मासी नानी भैण बुआ[6],
सब देसन डोली चाढ़ कुड़े[7] ॥९॥

---

(१) तेरी सहेली अर्थात तेरे साथी संगी ज्ञान और भक्ती से जन्म का उद्धार कर गये, अब तू भी भक्ती को कमाकर उद्धार कर।

(२) दृढ़ होकर सत्संग कर और विषयरस भोग त्याग। (३) सर्व ओर से उपराम होकर इन्द्रिय तथा मन को निग्रह करने का प्रयत्न कर (४) शरीर (५) मुहल्ला (६) पिता की बहिन (७) मृत्यु होने पर सब तेरा साथ छोड़ देंगे।

शहु[1] औड़कि घिन के वैसी तैनूँ,
तूँ अपना आप सिंगार कुड़े ॥१०॥
शहु अन्तर्यामी पूर्ण हेसाँ
तू अहंता ममता मार कुड़े ॥११॥

—:o:—

पौरी ॥१३॥ काफ़ी ॥

देखो क्या ही खूब अखाड़ा[2] है,
मृग तृष्णा[3] दा चमकारा है ॥१॥ रहाउ ।
कोई शब्द उते दीवाना है,

---

(१) काल रूपी भर्त्ता ने तुझको ले जाना है अतः तू अपना सुधार कर ले अर्थात तूने अपने स्वामी परमात्मा के पास जाना है जाने से पूर्व अपने आपको पावन और सुन्दर बना ले, सद्गुण रूपी भूषणों से सुन्दर बनाले ।

(२) तमाशे का स्थान या जगत (३) जैसे बन में पृथ्वी अथवा रेत सूर्य अथवा चांद की किरणों से मिलकर दूर से जल की भांति भासते हैं और हिरन उस जल को देखकर तृष्णा बुझाने के लिए दौड़ते हैं परन्तु जल न पाकर निराश हो जाते हैं और पशु होने के कारण बार बार उसी ओर दौड़ते हैं, मिथ्या जानकर उसका त्याग नहीं करते, वैसे ही यह जगत भी केवल नामरूप का प्रकाश है और अज्ञानी जीव इसको सत्य मानकर इससे सुख की इच्छा करते हैं और दिन रात पुरुषार्थ करके अपनी सारी आयु इसी में व्यतीत करते हैं परन्तु रंचक भी सुख

कोई रूप उते परवाना[1] है,
कोई गंध उते मस्ताना है,
कोई रस ते फासण हारा है ॥२॥
कई दौलत ने हैरान कीते,
कई रंडी ने बेजान कीते,
कई बेटे ने बेशान कीते,
क्या ही तृष्णा दा पासारा है ॥३॥
इह माया संदा फासा है,
इह मन नटवे दा हासा है,
देखो क्या ही खूब तमाशा है,
जो आया नाचन हारा है ॥४॥
जिभ दन्द गुलू सब खाय थके,

नहीं पाते उल्टा शोक और मोह के फंदे में फंस कर नाना प्रकार के क्लेश अनुभव करते हैं और अज्ञान के अधीन होकर उसकी आस्था को त्याग नहीं करते और अन्त तक मृग की न्याईं इस धोखे की टट्टी में क्रीड़ा करते रहते हैं इसलिए यह अखाड़ा खूब सुन्दर है। हे जिज्ञासी जनो, इसको कल्पित जानकर देखो परन्तु आसक्त न होना।

(१) परवाना एक कीड़ा होता है जिसको पतंग भी कहते हैं। वह दीपक के रूप को देखकर ऐसा दीवाना होता है कि दीपक के चारों ओर चक्कर काटता काटता उसी में जल मरता है। तैसे अज्ञानी रूप के विषय में आसक्त होकर पतंग की न्याईं रूपवान पदार्थों अथवा शरीरों के पीछे अपना बल, बुद्धि और धर्म नाश करते हैं।

हथ पैर कमाय कमाय थके,
तन भूषण वसतर पाय थके,
अजे भूरिख मांगन हारा है ॥५॥
क्यों आकड़ आकड़ चलना है,
क्यों अतर फुलेल मसलना है,
क्यों बकरे वाँगूं पलना है,
तेरे सिर ते काल करारा[1] है ॥६॥
कई शाह अमीर वज़ीर हुए,
कई रहज़न[2] चोर असीर[3] हुए,
कई आशिक पीर फकीर हुए,
नहीं अन्त हिसाब शुमारा है ॥७॥
इथों औड़िक इक दिन चलनाई,
घर छोड़ के जंगल मलनाई,
फिर अन्त मिटी विच रलनाई,
तैं काहे मरण विसारा है ॥८॥
इथे इक दम दा वरतारा है,
इथे अखीं दा झमकारा है,
सब फुरने दा विस्तारा है,
तैं किस पर पांव पसारा है ॥९॥

(१) काल निर्दयी जो सब को ले जाता है किसी को नहीं छोड़ता। (२) मार्ग लूटने वाले। (३) कैदी को कारागार अथवा जेलखाने में बंद रखते हैं।

इह सुपना सब संसारा है,
सब झूठा खेल पसारा है,
जो देखो चल्लनहारा है,
हेमाँ स्थिर ओंकारा है ॥१०॥



स्मरण घाट ॥५॥

पौरी ॥१॥

प्राणी अब तू सुरत संसार ॥१॥ रहाउ ।

छण छण अवधि घटे निशि-वासर,
बूझत नाहीं गंवार ॥२॥
जो कछु आज होय सो होवे,
मन ते काल विसार ॥३॥
काल काल करते गई आयु,
किया न कुछ वीचार ॥४॥
श्वास मात्र आयु पर बौरे[1],
सोयों पांव पसार ॥५॥
जो गुज़री सो फेर न आवे,
अब तू काज संवार ॥६॥
दुर्लभ देह पाय भज हरिहर,
हेमाँ होय उद्धार ॥७॥

---

(१) दिवाने, मूर्ख ।

पौरी ॥२॥

साधो हरि सिमरण चित लाईये ॥१॥ रहाउ ।

बैठत हरिहर ऊठत हरिहर,
हरिहर भोजन खाईये ॥२॥
हरिहर सुनिये हरिहर कथिये,
हरिहर ध्यान लगाईये ॥३॥
जहां साधु हरि कथा बखाने,
प्रेम युक्त तहां जाईये ॥४॥
सावधान हो सुनिये हरियश,
संशय मूल चुकाईये ॥५॥
परम पवित्र नाम किरपानिधि,
सिमर सिमर गत पाईये ॥६॥
बैठ एकान्त नाम रस पीजे,
मन का वेग मिटाईये ॥७॥
नाम बाँस पर मन अपने को,
बारम्बार चढ़ाईये ॥८॥
ज्यों ज्यों चढ़े शान्त रस पावे,
चंचल भाव भुलाईये ॥९॥
ज्यों ज्यों नाम बसे हृद अंतर,
त्यों त्यों आनन्द पाईये ॥१०॥

आठों याम होय श्रद्धालु,
गोविन्द के गुण गाईये ॥११॥
कीर्तन[1] कथन[2] भजन[3] संभाषण[4],
ज्यों त्यों नाम ध्याईये ॥१२॥
श्वास अमोल न वृथा खोइये,
हरि निधि पल्ले पाईये ॥१३॥
सब कर्मन से उत्तम स्मरण,
रुचि रुचि प्रीति लगाईये ॥१४॥
सिमर सिमर मन होवे निर्मल,
हेम्माँ राम समाईये ॥१५॥

पौरी ॥३॥

राम भजो राम भजो
राम भजो भाई ॥१॥ रहाउ ।
विषयन की प्रीत त्याग,
हरिजू की शरण लाग,
अन्त हो सहाई ॥२॥
माया का काज साज,
त्रिभुवन का सब समाज,

(१) प्रेम सहित गोविंद का गान करना (२) गोविंद की कथा करना (३) बारम्बार हरिनाम स्मरण करना (४) परस्पर हरि

स्वपना रैनाई ॥३॥
काया के पालन में,
माया के ख़्यालन में,
आयु बिताई ॥४॥
दारा सुत मोह त्याग,
संतन के संग लाग,
सिमरण चित लाई ॥५॥
हेमाँ जन कहे पुकार,
उत्तम जन्म ले सुधार,
अंत न पछुताई ॥६॥

पौरी ॥४॥

मेरे मना एको राम सहाई ॥१॥ रहाउ ।
सब जग अपने स्वारथ बाध्यो,
क्या बेटा क्या भाई ॥२॥
धन संपति सुख सब छण भंगुर,
ज्यों बादल की छाई ॥३॥
राव रंक सब खेल सिधाणे,
आखिर ख़ाक समाई ॥४॥
कहे हेमाँ गोविंद भजन बिनु,
अंत काल पछुताई ॥५॥

ी कथा
र हरि

पौरी ॥५॥

रे-हरि नाम सिमर मन्न मेरे ॥१॥ रहाउ ।

विषयन में सब अवधि बिताई,
मरण भयो अब नेड़े ॥२॥
पाँव पसार नींद बहु कीन्हीं,
अब तू जाग सबेरे ॥३॥
सुन्दर मन्दिर देख न भूलो,
औडिक जंगल डेरे ॥४॥
अंत समय सब होत परायो,
अब ही छाड़ बखेड़े ॥५॥
क्या तू करता मेरा मेरा,
कोई काम न आयो तेरे ॥६॥
सब मिल राम शरण तोहे राखें,
जब देखें यम घेरे ॥७॥
तांते अब ही सिमरो हरिहर,
काल न आवे नेड़े ॥८॥
सिमरण सार जगत में हेमाँ,
बिनु सिमरण सब झेरे ॥९॥

—:o:—

पौरी ॥६॥

राम रस मीठो रे भाई ॥१॥ रहाउ ।

अवर सकल रस फीके कड़वे,
मन की भूख न जाई ॥२॥
भोग भोग सब इन्द्रिय हारे,
अजहुँ शान्ति न आई ॥३॥
ज्यों ज्यो विषय मिलें इन्द्रियन को,
त्यों तृष्णा अधिकाई ॥४॥
क्षण भंगुर सुख सगरे जग के,
जो सेवे पछुताई ॥५॥
खोज खोज यह निश्चय कीन्हो,
राम शरण सुखदाई ॥६॥
होय अकाम राम रस चाखो,
हेमाँ मन तृपताई ॥७॥

—:०:—

सतगुरु सेवा घाट ॥ ६ ॥

पौरी ॥१॥

प्राणी[1] सतगुरु[2] सेव करिजे ॥१॥ रहाउ ।

तन[3] मन[4] धन[5] बाणी[6] अर्पण[7] कर,
गुरु पग[8] शीश धरीजे ॥२॥
गुरु की मूरत[9] हरि की मूरत,
रुचि रुचि दर्शन कीजे ॥३॥
आज्ञा मान तियागो ममता,
अपना आप गंवीजे ॥४॥
नाम उपदेश करे गुरु पूरण,
द्वै कर जोड़ सुनीजे ॥५॥

---

(१) प्राणधारी (२) सत्य-विद्या का उपदेश करने वाले ।

(३) तन द्वारा सतगुरु की सेवा करे और तन का मान त्यागे। (४) मन में सतगुरु को राम-रूप निश्चय करे और उनकी आज्ञा माने । (५) धन गुरु को भेट करे, अथवा धन की ममता का त्याग करके गुरु की शरण आवे । (६) बाणी द्वारा गुरु की महिमा गावे, और उनके उपदेश और नाम का आदर करे और प्रेम सहित उच्चारण करे । (७) पूर्वोक्त रीति से चारों अंगों को बरतना (८) चरण । (९) सतगुरु, सात्विक विद्या जो ब्रह्म-विद्या है उसके दाता हैं और हरि विष्णु रूप हैं तथा अनर्थ रूप संसार के नाशकर्ताहर शिवरूप हैं । ऐसे सतगुरु की मूर्ति का प्रेम सहित दर्शन करिए।

गुरु का वचन वेद का मंत्तर,
धार हृदय भ्रम छीजे[1] ॥६॥
गुरु का वचन भानु से उज्ज्वल,
तम अज्ञान मिटीजे ॥७॥
गुरु का वचन नाव से उत्तम,
भवजल पार लंघीजे ॥८॥
गुरु का वचन तोप का गोला,
भ्रम का कोट ढहीजे ॥९॥
गुरु का वचन ज्ञान की ऐनक,
श्रद्धा धार चढ़ीजे ॥१०॥
अमृत वाणी सतगुरु बोलें,
इक मन होय सुनीजे ॥११॥
जो गुरू कहें सो सत्य कर मानो,
जो गुरु कहें सो कीजे ॥१२॥
ऊठत बैठत सोवत जागत,
गुरु का ध्यान धरीजे ॥१३॥
सतगुरु तुल्य नहीं कोऊ दाता,
जो लीजे सो लीजे ॥१४॥
चार पदार्थ[2] सतगुरु पासे,
जो मांगो सो लीजे ॥१५॥

(१) नाश करिए (२) धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।

अमरपुरी सतगुरु दरबारा,
जो आवे सो जीजे ॥१६॥

मुक्ति खड़ी दरबार उड़ीके,
मोहि कब आदर दीजे ॥१७॥

आओ सैयो सतगुरु दरबारे,
मुक्ति पदारथ लीजे ॥१८॥

अठ सठ तीर्थ गुरु के चरणा,
निव निव शीश धरीजे ॥१९॥

हरि बिसरे गुरु याद दिलावें,
गुरु बिसरे क्या कीजे ॥२०॥

गुरु स्वामी गुरु अन्तर्यामी,
गुरु का नाम जपीजे ॥२१॥

सतगुरु ईश्वर, ईश्वर सतगुरु,
एको जान भजीजे ॥२२॥

गुरु परसादी संशय चूकें,
जन्म मरण दुःख छीजे ॥२३॥

नहीं कछु आवे नहीं कछु जावे,
अपना आप लभीजे ॥२४॥

प्रेम प्याला सतगुरु वाला,
पी संसार भुलीजे ॥२५॥
मगन होय हेमाँ निज मांहीं,
परमानन्द समीजे[1] ॥२६॥

पौरी ॥२॥

साधो सतगुरु शरणी आवो ॥१॥ रहाउ ।

सतगुरु पारब्रह्म परमेश्वर,
झुक झुक शीश निवावो ॥२॥
होय श्रद्धालु[2] सेव कमावो,
मन वांछित फल पावो ॥३॥
मान[3] दंभ[4] चतुराई[5] विद्या[6],
गुरु की भेंट चढ़ावो[7] ॥४॥
होय निरमान सुशील[8] शुद्ध चित्त,
निशि-दिन टहल कमावो ॥५॥

(१) समाइये (२) सत्य प्रतीत को धारकर (३) कुल यौवन, सुंदरता, धन, वर्णाश्रम, प्रभुत्ता, और महत्ता, आदि का मान (४) मिथ्या अहंकार, कपट लौकिक भेष (५) शंका समाधान में बुद्धि की चपलता और वाद विवाद में निपुणता (६) लौकिक विद्या (७) इन चारों को त्यागकर गुरु की शरण में आवो (८) आस्तिक बुद्धि वाले ।

द्वै कर[1] जोड़ सुनों गुरु-शिक्षा[2],
संशय[3] तिमिर मिटावो ॥६॥
गुरु की आज्ञा मानो माथे,
अपना आप गंवावो[4] ॥७॥
गुरु का वचन मान सुखदाता,
सत्य कर हृदय बसावो ॥८॥
सतगुरु पूरण अन्तर्यामी,
निमख न तेंहिं विसरावो ॥९॥
गुरु की ओट[5] धरी निशि-वासर,
गुरु का ध्यान लगावो ॥१०॥
ज्ञान मुक्ति के दाता सतगुरु,
सेव सेव सुख पावो ॥११॥
जो जो दीक्षा सतगुरु देवे,
तासों मन बुद्धि लावो ॥१२॥

(१) संकल्प-विकल्प रहित होकर दीनता और सत्य प्रतीत सहित (२) गुरु उपदेश (३) मैं कौन हूँ ? परमात्मा क्या है ? जगत क्या है ? जन्म मरण किसको होता है ? जीव ब्रह्म का भेद सत्य है अथवा अभेद सत्य है ? कर्म उपासना या ज्ञान से मुक्ति होती है अथवा तीनों से मुक्ति होती अथवा दो से मुक्ति होती है ? मुक्ति का क्या स्वरूप है ? इत्यादि इन सब बातों का तिमिर अथवा अन्धकार जो तुम्हारे मन में है उसे मिटाओ (४) अपनी बुद्धि की चतुराई, ग्लानि, और तर्क का त्याग करो (५) भरोसा।

बीस बिसवे[1] गुरु का मन मानो,
हेमाँ ब्रह्म समावो ॥१३॥

—:o:—

पौरी ॥३॥

जग में गुरु जैसा नहीं मीत ॥१॥ रहाउ ।

जाके संग मिटे सब संशय,
स्थिर होवे चीत ॥२॥
जांके संग प्रकाशे आतम,
फूटे तन की भीत[2] ॥३॥
जांके संग वासना नासे,
होवे मन पर जीत ॥४॥
जांके संग मिटे दुर्बुद्धि[3] ,
उपजे निर्मल रीत ॥५॥
जांके संग नीत[4] मन भावे,
नासे सकल अनीत[5] ॥६॥
जांके संग ज्ञान परकाशे,
नासे जग की प्रीत ॥७॥

(१) मन वचन और कर्म द्वारा गुरु का उपदेश कमाओ। (२) दीवार, शरीर में सत्य प्रतीत (३) अशुभ वासना मिथ्या निश्चय (४) वेद और शास्त्र उक्त (५) वेद और शास्त्र विरुद्ध ।

जांके संग विपर्यय[1] नासे,
उपजे सत्य परतीत ॥८॥
जांके संग कामना पूरण,
निर्भय होय अजीत[2] ॥९॥
ऐसो सज्जन[3] सतगुरु पूर्ण,
हेमाँ लावो चीत ॥१०॥



(१) भ्रांति, विपरीत भावना (२) जो किसी से न जीता जाए (३) सत्पुरुष परम सुहृद ।

सतसंग महिमा घाट ॥७॥

पौरी ॥१॥

प्राणी सँत समागम[1] कीजे ॥१॥ रहाउ ।

शरद्धा धार चलो सतसंगत,
अमृत बैन सुणीजे ॥२॥
महा पुनीत पवित्र[2] संतजन,
तन मन धन अरपीजे ॥३॥
संत क्रिया[3] नहीं निंदिये रंचक,
नहीं उपहास[4] करीजे ॥४॥
संत सरोवर कर इसनाना,
तन मन शीतल कीजे ॥५॥
संत समान नहीं कोऊ दाता,
द्रारिद्र[5] दोष[6] मिटीजे ॥६॥
जो जो धर्म सलाहें मुख से,
सो सो धर्म कमीजे ॥७॥
जो जो संत तियाग बतावें,
सो सो वस्तु छुड़ीजे ॥८॥

---

(१) संगत, समीपता (२) भेदरूपी पाप और संशय रूपी मल से रहित (३) देह और इन्द्रियों की चेष्टा (४) हँसी-मज़ाक (५) आतम धन से शून्यता, वासना (६) रोग।

संत वचन है दरपण[1] हरि को,
झुक झुक[2] दर्शन कीजे ॥९॥
संत उपदेश महा रस[3] भीनो,
प्रेमयुक्त रस पीजे ॥१०॥
षट्‌लिंगन[4] युत शरवण करके,
बैठ एकान्त मनीजे[5] ॥११॥

(१) साक्षात परमात्मा प्राप्ति का साधन (२) निर्मान और श्रद्धालु होकर (३) अविनाशी रस, मोक्षरस, आत्मरस (४) षट्‌लिंग यह है :– १ उपक्रम—उपसंहार की एकता; २ अभ्यास ३ अपूर्वता ४ फल ५ अर्थवाद ६ उत्पत्ति। १– उपक्रम नाम आरम्भ का है। उपसंहार समाप्ति को कहते हैं। अद्वितीय ब्रह्म के आदि-अन्त कथन का नाम उपक्रम उपसंहार की एकता है, तात्पर्य यह है कि जो अर्थ आदि में हो वही अर्थ अन्त में हो, यह प्रथम लिंग श्रवण का है (२) सत्य अद्वितीय ब्रह्म के बारम्बार कथन का नाम अभ्यास है (३) अद्वितीय ब्रह्म केवल उपनिषद प्रमाण का विषय है अन्य प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों का विषय नहीं इस सिद्धान्त का प्रतिपादन अपूर्वता कहलाता है (४) अद्वितीय ब्रह्मज्ञान से अद्वितीय ब्रह्म की प्राप्ति रूप फल के कथन का नाम फल लिंग है (५) अद्वितीय ब्रह्म के ज्ञान के स्तुति करने का नाम अर्थवाद है। (६) अद्वितीय ब्रह्म का दृष्टान्तरूप युक्तियों से बार बार प्रतिपादन का नाम उपपत्ति है। इस प्रकार षट्‌लिंगों से सतों के उपदेश को श्रवण करना। (७) एकान्त में बैठकर श्रवण किये हुए वचनों को बारम्बार चिंतन करना, वैदिक और लौकिक युक्तियों से संशय और भेद को दूर करके उन के

मनन किए निदिध्यासन[1] होवे,
अपना आप लखीजे ॥१२॥
होय अचिंत[2] व्यवहार[3] करीजे,
अथवा त्याग गहीजे[4] ॥१३॥
जीवन-मुक्ति सदा आनन्दी,
हेमाँ निज सुख लीजे ॥१४॥

—:o:—

पौरी ॥२॥

अब हम संत समागम आए ॥१॥ रहाउ ।

ताप[5] मिटे कसमल सब उतरे,
वैर विरोध भुलाए ॥२॥

(१) वृत्ति को अखण्ड ब्रह्माकार करना तेल, धारावत् वृत्तिका आत्माकार प्रवाह निदिध्यासन कहलाता है।

(२) भूत भविष्यत की चिंता से रहित; कर्त्ता कर्म क्रिया आदिक त्रिपुटियों की चिंता से रहित (३) प्रवृति में लगें अर्थात खेती, व्यापार, नौकरी आदि करें (४) निवृत होकर विद्वत सन्यास को धारें (५) अध्यात्मिक, अधिदैविक, अधिभौतिक यह तीन ताप हैं। अन्तःकरण के दुःख को आध्यात्मिक ताप, इन्द्रियों के दुःख को अधिदैविक ताप कहते हैं और स्थूल शरीर के दुःख को अधिभौतिक ताप कहते हैं।

सुन सुन वचन प्रकाश्यो ज्ञाना,
संशय सकल भुलाए ॥३॥
काम[1] क्रोध[2] हिंसा[3] ममता[4] छल[5],
गर्व[6] गुमान[7] गंवाए ॥४॥
जत[8] वैराग्य[9] विचार[10] नम्रता,
सत्य[11] संतोष[12] कमाए ॥५॥
निशि-वासर संतन सों मिल मिल,
गोविन्द के गुण गाए ॥६॥
संत प्रसाद पछान्यो आतम,
जन्म मरण बिसराए ॥७॥
घट ही मांहि निरंजन पायो,
हेमाँ सहज समाए ॥८॥

—:o:—

(१) कामना वृति, विशेष कर इसकी प्रवृति स्त्री की कामना पर है (२) दूसरे के कायिक, वाचिक, मानसिक कर्म में विपरीत बुद्धि धारकर धैर्य को त्याग करना (३) तन मन वाणी के द्वारा दुःख देना (४) स्त्री, पुत्र, धन आदिक पदार्थों में अपना सम्बन्ध (५) धोखा (६) अभिमान (७) मिथ्या अहंकार (८) हठ द्वारा इन्द्रियों को जीतना (९) लोक-परलोक के सुख का त्याग (१०) पूर्व अपूर्व को सोचना, सत्य असत्य को जांचना। (११) मिथ्या वचन, मिथ्या व्यवहार, मिथ्या मनोराज्य, और मिथ्या निश्चय का अभाव (१२) प्रसन्नता।

पौरी ॥३॥

साधो सत्संगत जग सार ॥१॥ रहाउ ।

आन[1] संग जे तक जग माहीं,
सगरे सहित विकार ॥२॥
तीरथ से उत्तम सत्संगत,
मन का होय उद्धार ॥३॥
सत्संगति में दुर्मति नासे,
होवे शुद्ध आचार[2] ॥४॥
सत्संगति में शुभ गुण उपजें,
नासें सकल विकार ॥५॥
सत्संगति में सहजे उपजें,
सम[3] संतोष विचार ॥६॥
शांति-पदारथ निशदिन पाइये,
संतन के दरबार ॥७॥
बिन सत्संग शांति नहीं आवे,
केतक हठ तप धार ॥८॥
संतन के संग गोविन्द भावें,
भूले सब संसार ॥९॥
सत्संगति में संशय नासे,

(१) दूसरे या और (२) व्यवहार, आहार और स्वभाव (३) मन का अशुभ वासना से संयम ।

भासे आतम सार ॥१०॥
सत्संगत में ज्ञान प्रकाशे,
होवे हरि दीदार ॥११॥
सत्संगति में ज्ञान प्रकाशे,
उपजे तत्व विचार ॥१२॥
शरद्धा धार करो सतसंगत,
हेमाँ कहत पुकार ॥१३॥

पौरी ॥४॥

जग में सन्त महारस[1] भीने[2] ॥१॥ रहाउ ।

घूरम आतम मद के माते,
निर्भय सद् तृपतीने ॥२॥
समदरशी शीतल हृदय नित,
रहित विखाद[3] अदीने[4] ॥३॥
सब द्वंदन[5] से न्यारे वरतें,
नित्य प्रबुद्ध[6] प्रवीने[7] ॥४॥
निशि-वासर भूलें तुरिया[8] पद,
ब्रह्म दृष्टि को लीन्हे ॥५॥

(१) ब्रह्मानन्द (२) मग्न (३) ईर्षा, झगड़ा (४) दीनता से रहित, बेपरवाह (५) भेद, हर्ष शोक हानि लाभ आदि का भेद बुद्धि से रहित सम वृति से वरतते हैं। (६) स्वरूप ज्ञानमें निरावर्ण स्थिति (७) ब्रह्म विद्या में चतुर (८) भाव-अभाव में न शत्रु
मित्र, और [illegible]

द्वैत-भाव निश्चय नहीं आने,
केवल आतम[1] चीन्हें[2] ॥६॥
ममता लोभ न व्यापे जिनके,
असुर कर्म[3] तज दीन्हें ॥७॥
सद् संतुष्ट विराजें हेमाँ,
नूतन नित्य नवीने ॥८॥

—:०:—

पौरी ॥५॥

संत सभा मिल हरि यश गावें,
गाय गाय गोविन्द् रिझावें ॥१॥ रहाउ ।
बोलें निश-दिन अमृत वाणी,
मन की सकली तप्त बुझावें ॥२॥
मंगल रूप सदा आनन्दी,
दर्शन से किल विख[4] सब जावें ॥३॥

(१) अपना आप (२) देखते हैं (३) सब आसुरी संपदा के दुर्गुण (४) पाप ।

ज्ञान मुक्ति के दाता जग में,
वाक्य[1] सुनाय अज्ञान मिटावें ॥४॥
शरणागत[2] पर होय दयालु,
परमारथ का राह बतावें ॥५॥
भव सागर में होयँ सहायक,
विषयन[3] से वैराग्य करावें ॥६॥

---

(१) वाक्य दो प्रकार का होता है। एक अवान्तर वाक्य, दूसरा महा वाक्य। ब्रह्म अथवा जीव के स्वरूप का बोधक वाक्य अवान्तर वाक्य कहलाता है। इससे परोक्ष-ज्ञान होता है। ब्रह्म और जीव की एकता का बोधक-वाक्य महावाक्य कहलाता है, इससे अपरोक्ष ज्ञान-होता है। संत दोनों प्रकार के वाक्य सुनाकर असत्वापादक और अभानापादक रूप अज्ञान को दूर करते हैं। ब्रह्म नहीं है इसका नाम असत्वापादक आवरण है और इसकी निवृत्ति परोक्षज्ञान से होती है। जब गुरु ब्रह्म के स्वरूप को "सत्यं ज्ञानमनन्तम् ब्रह्म" इत्यादि अवतर वाक्यों से निरूपण करते हैं, ब्रह्म भासता नहीं, इसका नाम अभानापादिक आवरण है। इसकी निवृत्ति अपरोक्ष ज्ञान से होती है जब गुरु जीव ब्रह्म की एकता को "तत्वमसि" इत्यादिक महावाक्यों से निरूपण करते हैं।

(२) जो संतों की शरण आवे (३) शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गंध यह पांच विषय हैं।

निष्प्रयोजन[1] निष्काम[2] अदंभी[3] ,
प्रेमयुक्त महावाक्य[4] सुनावें ॥७॥
लीन करावें मन के संशय[5] ,
परमातम के संग मिलावें ॥८॥
आओ चलें संतन की शरणी,
विधी पूर्वक[6] शीश निवावें ॥९॥
श्रद्धा सहित सुनें ब्रह्म-विद्या[7] ,
मन के संशय सकल मिटावें ॥१०॥

---

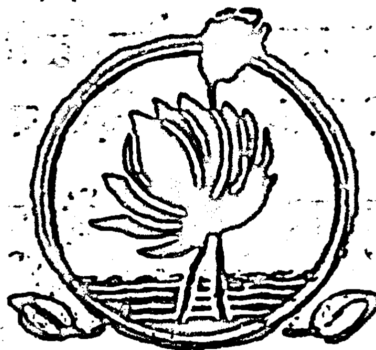
(१) प्रयोजन से रहित (२) कामना से रहित (३) दंभ अर्थात दिखलावे से रहित (४) प्रज्ञानमानन्दम् ब्रह्म। अहं ब्रह्मास्मि। "तत्वमसि" अयमात्मा ब्रह्म, एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म। नेह नानास्ति किंचनः। सर्वं खल्विदं ब्रह्म, इत्यादिक यह महावाक्य हैं।

(५) संशय दो प्रकार के होते हैं पहला प्रमाण गत दूसरा प्रमेयगत. वेद और शास्त्र जीव ब्रह्म की एकता के प्रतिपादक हैं अथवा भेद के ? यह प्रमाणगत संशय है और श्रवण से लीन होता है मेरी आत्मा ब्रह्मरूप है या ब्रह्म से भिन्न है यह प्रमेयगत संशय है और इनकी मनन से निवृति होती है।

(६) मान, कपट, चतुराई और ग्लानिता से रहित होकर प्रणाम करना।

(७) जिस विद्या में यथार्थ-वस्तु का निरूपण हो, ब्रह्म का स्वरूप और लक्षण स्पष्ट हो, ब्रह्मानन्द में चित्त की स्थिति के साधन हो, शांति रस से पूर्ण हो, वही ब्रह्म-विद्या कहलाती है।

सावधान[1] हो हरि रस मुन्चें,
होय अनन्य[2] शरीर भुलावें ॥११॥
जगत भावना त्यागें सकली,
परमातम में स्थित पावें ॥१२॥
चित से होय अचित विराजे,
हेमाँ ज्योति ज्योति समावें ॥१३॥



(१) आलस्य, नींद और विक्षेपता से रहित होकर ब्रह्मविद्या केतात्पर्य को बुद्धि में बसाएँ (२) एकाग्र चित्त, ब्रह्म से अभेद।

ध्यान घाट ॥८॥

पौरी ॥१॥

प्राणी हरि को ध्यान लगाओ ॥१॥ रहाउ ।

काया साध करो दृढ़ आसन,
इत उत नाहिं डुलावो ॥२॥
सोवो थोड़ा बोलो थोड़ा,
थोड़ा भोजन खावो ॥३॥
विषय भावना सकल त्यागो,
चित्त न कितहुं लावो ॥४॥
देह भावना जान अमंगल[1],
आतम तीर्थ न्हावो ॥५॥
काम क्रोध मत्सर पर निंदा,
इनसे प्रीत हटावो ॥६॥
जत[2] वैराग्य[3] विचार[4] मित्रता[5],
निशिदिन हृदय बसावो ॥७॥
धन दारा[6] सुत की ममता से,
मन को वेग[7] छुड़ावो ॥८॥

---

(१) मलीन (२) काम को जीतना (३) मोह त्याग करना (४) सत्य असत्य का सोचना (५) सब के साथ मित्रभाव रखना और मीठा बोलना (६) स्त्री (७) जल्दी ।

वेद गुरु जो शिक्षा देवें,
वैसी कार कमावो ॥९॥
वासुदेव नारायण ईश्वर,
राम गोविन्द ध्यावो ॥१०॥
पूरा बोलो पूरा तोलो,
पूरे सों हित लावो ॥११॥
नाम चोग पर प्रेम जाल में,
मन खग[1] बेग फंसावो ॥१२॥
भूत भविष्यत चिंता त्यागो,
वर्तमान सुख पावो ॥१३॥
बिना विचार न विचरो जग में,
साँची रीति चलावो ॥१४॥
सत्त-वस्तु[2] सों मन को जोड़ो,
लय[3] विक्षेप[4] नसावो ॥१५॥
सावधान हो अमृत अचवो,
मृत का दोष[5] मिटावो ॥१६॥
पूरण को पूरण कर देखो,
ऊरन भाव भुलावो ॥१७॥
द्वैत भाव निश्चय नहीं आनो,
इत विधि नाम ध्यावो ॥१८॥

(१) पक्षी (२) जो तीन काल एक रस रहने वाली वस्तु है (३) नींद (४) चित्त की चंचलता (५) भय।

स्वास स्वास पर मन अपने को,
प्रेम हिंडोल झुलावो ॥१९॥
अन्तर बाहिर एको देखो,
ज्ञान पदारथ पावो ॥२०॥
ज्ञान खड़ग ले मन को मारो,
निश्चल ध्यान लगावो ॥२१॥
हरि मन मन हरि एक भए ते,
हेमाँ सहज समावो ॥२२॥

पौरी ॥२॥

मेरे मन राम नाम गुण गाय ॥१॥ रहाउ ।

विषयानन्द छरदवत् त्यागो,
आतम सुख को पाय ॥२॥
पाँच तत्त्व को देह रच्यो है,
तांको संग भुलाय ॥३॥
जगत भावना सकल मिटावो,
पूरण ब्रह्म ध्याय ॥४॥
नहीं कुछ सोचो नहीं कुछ चितवो,
इक टक ध्यान लगाय ॥५॥
आपा मार राम को सेवो,
निर्वाणी पद पाय ॥६॥

अन्तर्गत होय अमृत भुञ्चो,
हेमाँ सहज समाय ॥७॥

—:o:—

पौरी ॥३॥

रे हरि नाम सुधारस चाखो ॥१॥ रहाउ ।

लौकिक वचन भुलावो सकले,
हरिहर निशि-दिन भाखो ॥२॥
राम विना जो जो चित चितवे,
तांको कल्पित लाखो ॥३॥
केवल नाम हरि का साचा,
हेमाँ चित में राखो ॥४॥

—:o:—

पौरी ॥४॥

साधो छिन छिन राम चितारो ॥१॥ रहाउ ।

रिद में राम विराजे सद ही,
होय अचिंत संभारो ॥२॥
मन चित बुद्धि को साची जोई,
तांको राम विचारो ॥३॥
राम विना जो जो चित चितवे,
तांको तुरत विसारो ॥४॥

जगत भावना जान अमंगल,
चित से बेग निकारो ॥५॥
एको राम बिराजे सब में,
दुतिया भाव निकारो ॥६॥
अन्तर बाहिर राम पछानो,
भेद भावना जारो ॥७॥
मान ईर्षा सकल त्यागो,
नहीं जीतो नहीं हारो ॥८॥
राम राम चितवो निशि-वासर,
समता मुदिता धारो ॥९॥
बारम्बार राम चिंतन से,
चित होय राम अकारो ॥१०॥
चित अचित्त भयो जब हेमाँ,
तब ही राम अपारो ॥११॥

—:o:—

पौरी ॥५॥

राम रस चाखो मेरे मीत ॥१॥ रहाउ ।

प्रेम युक्त रस भीने छिन छिन,
गावो गोविन्द गीत ॥२॥
सावधान हो नाम विचारो,
आवे मन पर जीत ॥३॥ (१)

सदा रहो हरि के रंग-राते,
बिसरे जग की रीत ॥४॥
निशि-दिन मगन रहो आतम में,
टूटे दुःख की भीत ॥५॥
होय अनन्य[1] कमावो भक्ति,
भूले नीत अनीत ॥६॥
कमल[1] लिखी मूरति ज्यों हेमाँ,
स्थिर होवे चीत ॥७॥



(१) एकाग्र, अभेद।

धर्म घाट ॥ ६ ॥

पौरी ॥१॥

साधो धर्म न दया समान ॥१॥ रहाउ ।

यज्ञ होम नैवेद्य दान व्रत,
सबसे उत्तम जान ॥२॥
जे तक धर्म वेद में भाखे,
सब में दया प्रधान ॥३॥
करुणा क्षमा अहिंसा शान्ति,
इसके अन्तर मान ॥४॥
कोमल चित्त को दया कहत हैं,
आचार्य बुद्धिमान ॥५॥
दया बसे जिस नर के हृद में,
सो नर देव समान ॥६॥
दया नहीं जिस नर के अन्तर,
सो नर असुर पछान ॥७॥
असुर स्वभाव न कबहूँ धारो,
मन में समझो ज्ञान ॥८॥

---

(१) जैसे दीवार अथवा कागज़ पर कमल फूल की मूर्ति हो और पवन के वेग से उसके पत्र नहीं हिलते, अचल ही रहते हैं वैसे ही भक्ति से चित्त भी स्थिर हो जाता है ।

पशु पच्छी तिर्यक[1] मानुष पर,
राखो दृष्टि समान ॥९॥
जो कोई भयकर शरणी आवे,
सब का राखो मान ॥१०॥
वचन कठोर न कबहूं बोलो,
नहीं धारो अभिमान ॥११॥
हिंसा-भाव न कबहूं बरतो,
निशि-दिन राखो ध्यान ॥१२॥
सब को आप समान पछानो,
त्यागो मन का मान ॥१३॥
काहे क्रोध करो काहू पे,
सब घट ब्रह्म समान ॥१४॥
इस विधि जो नर बरते हेमाँ,
सो मूरत भगवान ॥१५॥

पौरी ॥२॥

साधो मन की मैल निवारो ॥१॥ रहाउ ।

हिंसा दम्भ अविद्या मत्सर[2],
द्रोह बखीली[3] हारो ॥२॥

(१) पेट से चलने वाली सृष्टि (२) द्वेष, मिथ्या अभिमान (३) दूसरे के साथ बांटकर न खाना, न दूसरों को अपना गुण देना, न उपकार करना ।

आसा तृष्णा चिंता त्यागो,
ममता मोह बिसारो ॥३॥
दुर्जन संग तजो निशि-वासर,
मिथ्या भावना जारो ॥४॥
श्वास श्वास सिमरो परमेश्वर,
छिन छिन राम चितारो ॥५॥
ऊठत बैठत सोवत जाग्रत,
हरि चरनन चित्त धारो ॥६॥
चित्त चंचल को वश कर राखो,
मूल न तांहि पसारो ॥७॥
प्रीत तजो दारा सुत धन की,
कंटक क्रोध निकारो ॥८॥
श्रद्धा धार करो सत्संगत,
सकली मैल उतारो ॥९॥
जगत भावना सकल त्यागो,
पूरण ब्रह्म निहारो ॥१०॥
आतम में परमातम देखो,
द्वैत भावना जारो ॥११॥
कहे हेमाँ मन शुद्ध भए ते,
आप तरो कुल तारो ॥१२॥

—:०:—

पौरी ॥३॥

अपना आप करो निरवार ॥१॥ रहाउ ।

अपना लेखा आप संभालो,
खोटा खरा विचार ॥२॥
जो जो दुष्ट कर्म मन चितवे,
सो सो बेग निकार ॥३॥
बैठ विचार करो मन मांहीं,
अपना आप संभार ॥४॥
देह अभिमान छरदवत् त्यागो,
मिथ्या जान असार ॥५॥
जो जो कर्म करो निशि-बासर,
सो सो बैठ विचार ॥६॥
साक्षी होय विचारो सब को,
जो आचार व्यवहार ॥७॥
देह से भिन्न प्राण से न्यारा,
अपना आप चितार ॥८॥
नहीं कोई अपना दुश्मन मानो,
नहीं कोई अपना यार ॥९॥
ना काहू को बलकर जीतो,
ना काहू से हार ॥१०॥

जहां जहां चरण धरो धरणी पर,
नीचे दृष्टि निहार ॥११॥
जो जो भला करो काहू पे,
सो सो मन से डार ॥१२॥
जो जो बुरा करे कोई तुम से,
सकलो बैठ बिसार ॥१३॥
मुनसिफ[1] होकर आप विचारो,
खोटे कर्म निकार ॥१४॥
जो जो संत उपदेश बतावें,
सो सो हृद में धार ॥१५॥
पर-स्त्री पर-निन्दा त्यागो,
पर-धन विष ज्यों डार ॥१६॥
चोरी हिंसा खुदी[2] बखीली,
मिथ्या वचन बिसार ॥१७॥
साची रीत चलावो जग में,
सच सों राखो प्यार ॥१८॥
कहे हेमाँ निश्चय कर मानो,
भव से उतरो पार ॥१९॥

—:०:—

(१) न्यायकारी (२) अभिमान।

पौरी ॥४॥

साधो तृष्णा तज सुख पावो ॥१॥ रहाउ ।

देह भाग्य से जो कुछ आवे,
तासों मन तृप्ताओ ॥२॥
होय निराश विराजो जग में,
मूल न आस बढ़ावो ॥३॥
विषयन की तृष्णा दुखदाई,
बल कर तांहि हटावो ॥४॥
तृष्णा आग पदारथ लकड़ी,
डाल काहे भड़कावो ॥५॥
तृष्णा मूल न तृपते कब हूं,
यद्यपि केतक पावो ॥६॥
जल संतोष आग-वत् तृष्णा,
छिड़क छिड़क बिस्माओ ॥७॥
बिन संतोष शान्ति नहीं आवे,
यद्यपि राज कमावो ॥८॥
क्षणभंगुर सुख धन संपति के,
काहे मन बिगसावो ॥९॥
धार संतोष शांति-रस भुञ्चो,
काहे इत उत धावो ॥१०॥

तृष्णावान सदा क्षुधारथ,
त्याग तांहि तृपतावो ॥११॥
नित संतुष्ट रहो मन मांहि,
हेमाँ सहिज समावो ॥१२॥

पौरी ॥५॥

साधो साचा भेष[1] बनाईये ॥१॥ रहाउ ।

भक्ति[2] टोपी सतता[3] पगड़ी,
कुरता ज्ञान[4] सजाईये ॥२॥
सहज[5] का अंगा धर्म[6] दुपट्टा,
प्रेम रूमाल उठाईये ॥३॥
ब्रह्मचर्य[7] पाजामा धोती,
जत[8] लंगोट चढ़ाईये ॥४॥
सम[9] दम[10] पनियाँ[11] पांव चढ़ावो,
मन तन का सुख पाईये ॥५॥

(१) रूप (२) परमात्मा में अनन्य स्थिति (३) एक रसता (४) आत्मज्ञान (५) अचिन्तता (६) सत्य वस्तु में सत्य प्रतीत (७) आठ प्रकार के मैथुन का त्याग। जैसे श्रवण, स्मरण कीर्तन, चितवन, एकान्त मिलाप, दृढ़ संकल्प, यत्न, प्राप्ति, इन से रहित रहना ब्रह्मचर्य है (८) इन्द्रियों का जीतना विशेषतया रसना और उपस्थ इन्द्रिय के विषय से रहित रहना और बलात् इनसे मन को रोकना (९) मन को खोटी वासना से रोकना (१०) इन्द्रियों को विषयों से रोकना (११) जूती।

साचा वणिज करो निशि-वासर,
साची कार कमाईये ॥६॥
साचा बोलो सांचा तोलो,
साची कलम चलाईये ॥७॥
साचा भोजन रुच रुच खावो,
साचा पान चबाईये ॥८॥
धीरज[1] खाट संतोष[2] बिछौना,
तकिया त्याग[3] लगाईये ॥९॥
चिंता त्याग[4] करो दृढ़ आसन,
समता[5] नींद उड़ाईये[6] ॥१०॥
सांची कहणी साची रहणी,
हेमाँ निज प्रगटाईये[7] ॥११॥

पौरी ॥६॥

साधो शान्ति सरोवर न्हावो ॥१॥ रहाउ ।

शीतल होय विराजो जग में,
ताप कलेश मिटावो ॥२॥

(१) सुख दुःख को सहना (२) जो प्राप्त हो, उसी में प्रसन्न रहना (३) सर्व मन रचित पदार्थों की विस्मृति, ऐसा तकिया मन की स्थिति का परम सहायक है (४) लोक परलोक की चिंता त्याग ही दृढ़ आसन है (५) सर्व बुद्धि कल्पित भेद से रहित होकर केवल आत्म मात्र स्थिति में लीन रहना (६) करिए (७) प्रगट करना योग्य है ।

मन का वेग निवारो बल कर,
सहिज अवस्था पावो ॥३॥
जो जो वचन सुनो लोगन से,
सो सो वेग भुलावो ॥४॥
रहो एकान्त शांति रस भुञ्चो,
आतम स्थिति पावो ॥५॥
नहीं दुःख पावो नांही दुःखावो,
निर्भय होय निभावो ॥६॥
शान्ति समान तपस्या नांहीं,
धार हृदय तृपतावो ॥७॥
शांति सखी अतिशय रस भीनी,
तासों नेह लगावो ॥८॥
शांति पदारथ दुर्लभ जग में,
संतन सों मिल पावो ॥९॥
शांति स्वरूप रहो निशि-वासर,
मूल न मन कलपावो ॥१०॥
शांति गहो तृष्णा सब त्यागो,
हरि निधि[1] पल्ले पावो ॥११॥
धीरज दया चमा शीतलता,
सत्य संतोष कमावो ॥१२॥

(१) कोष या खजाना ।

क्रोध त्यागो लोभ त्यागो,
ममता मोह भुलावो ॥१३॥
शांति स्वरूप अचल परमातम,
निशि दिन हृदय बसावो ॥१४॥
मगन रहो ब्रह्मानन्द मांहिं,
हेमाँ सहिज समावो ॥१५॥



विचार घाट ॥ १० ॥

पौरी ॥१॥

साधो अपना आप संवारो ॥१॥ रहाउ ।

जो जो कर्म करो निशि-वासर,
सो सो बैठ विचारो ॥२॥
पश्चाताप करो मन मांहि,
निंदित कर्म निवारो ॥३॥
उत्तम कर्म कमावो निशि दिन,
करतत भाव बिसारो ॥४॥
निवकर चलो बाँट कर खावो,
मीठा वचन निकारो ॥५॥
गर्व गुमान ईर्षा निन्दा,
विषय अभिलाषा हारो ॥६॥
सम[1] संतोष[2] विचार[3] संतन संग[4],

---

(१) मन को विषय वासना से उपसम रखना (२) यथा लाभ संतुष्ट रहना, प्राप्ति पर प्रसन्नता और अप्राप्त की इच्छा न करना (३) मैं कौन हूँ ? परमात्मा क्या है ? और जगत क्या है ? इसको सत्संग द्वारा खोजना (४) ब्रह्मनिष्ठी ब्रह्म श्रोत्री महात्मा का संग करना ।

क्षमा[1] ग़रीबी धारो ॥७॥
लोक ईच्छणा[2], पुत्र ईच्छणा[3],
देह ईच्छणा[4] जारो[5] ॥८॥
धार विवेक देह को खोजो,
नित्य अनित्य विचारो ॥९॥
देह अनित्य जान कर त्यागो,
आतम नित्य संभारो ॥१०॥
शास्त्र[6] विचार करो मन निर्मल,
मान अपमान सहारो ॥११॥
तन मन अर्प करो गुरु सेवा,
मोक्ष भावना धारो ॥१२॥
जो गुरु कहें सो कार कमावो,
शंका[7] तर्क[8] निवारो ॥१३॥

(१) दूसरे के क्रोध को सहारना और दूसरे के अवगुण को छिपाना (२) लोकवासना अर्थात् सारा लोक मेरी स्तुति करे कोई भी निंदा न करे, सो ऐसा असंभव है (३) पुत्र की इच्छा (४) देह को पुष्ट, पवित्र और सुन्दर रखने की इच्छा (५) इन तीनों वासनाओं को हृदय से निवृत्त करो (६) सत्शास्त्र जिनमें ब्रह्म का प्रतिपादन और जगत का निषेध है। उनको गुरु मुख द्वारा विचार कर मन का संशय और अज्ञान दूर करो। (७) चतुराई और हठ से बारम्बार प्रश्न करना और मनन न करना (८) कुतर्क अथवा ग्लानि।

गुरु का वचन खड़्ग से तीक्ष्ण,
मन का सीस[1] उतारो ॥१४॥
मन को मार अज्ञान निवारो,
इत विधि आप संभारो ॥१५॥
हेमराज विचरो जग मांहि,
कमल फूल ज्यों न्यारो ॥१६॥

पौरी ॥२॥

साधो अपना आप विचारो ॥१॥ रहाउ ।

खोज करो काया के मांहिं,
आतम तत्व निहारो ॥२॥
देह से भिन्न प्राण से न्यारा,
अपना रूप संभारो ॥३॥
दस इन्द्रिय[2] के प्रेरक तुम ही,
ज्ञान स्वरूप तुम्हारो ॥४॥

---

(१) मन का सीस मान है उसको गुरु के बचनों द्वारा दूर करो (२) ५ ज्ञान-इन्द्रियां और ५ कर्म इन्द्रियाँ हैं, ज्ञान इन्द्रियोंसे ज्ञान होता है, जैसे श्रोत, त्वचा, नेत्र, रसना और नासिका कर्म इन्द्रियों से कर्म होता है जैसे वाक, हस्त, पाद, उपस्थ और गुदा, इन दस इन्द्रियों से तुम ही अपनी ज्ञान-शक्ति द्वारा प्रेरणा करने वाले हो क्योंकि तुम्हारा स्वरूप केवल ज्ञान अर्थात्

अंतःकरण[1] चतुष्टय साक्षी[2],
तीन गुणों से न्यारो ॥५॥
पुरुष न नार, न देवा देवी,
नहीं हलको नहीं भारो ॥६॥
आश्रम[3] वर्ण[4] नाम[5] के ज्ञाता[6],

(१) वास्तव में अन्तःकरण एक है परन्तु वृत्ति भेद द्वारा चार प्रकार का है संकल्प विकल्प वृत्ति से मन, चितवना वृत्ति से चित्त, निश्चय वृत्ति से बुद्धि, और अहंवृत्ति से अहंकार कहा जाता है, इस प्रकार से एक ही अन्तःकरण की चार प्रकार की वृत्तियाँ शास्त्र में प्रसिद्ध हैं, अतः इन चारों वृत्तियों के तुम साक्षी या प्रकाशक हो।

(२) साक्षी नाम समीपवर्ती, उदासीन और चैतन्य का है तुम अन्तःकरण के समीपवर्ती हो, अधिष्ठान हो और अन्तःकरण से उदासीन हो अकर्ता उभोक्ता होने के साथ चैतन्य हो कर अन्तःकरण के ज्ञाता और प्रकाशक हो, इसलिए साक्षी के लक्षण तुम्हारे स्वरूप में घटते हैं।

(३) ब्रह्मचर्य, ग्रहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास, यह चार आश्रम हैं (४) ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र यह चार वर्ण हैं (५) शरीर की उत्पत्ति के बाद शरीर के ज्ञान-निमित्त जो नाम कल्प कर रखा है वह नाम, जैसे राम, मोहन आदि (६) आश्रम वर्ण और नाम के तुम ज्ञाता हो, जैसे अन्य पुरुष तुम्हारे आश्रमादिक का ज्ञाता है वैसे तुम भी अपने आश्रम, वर्ण और नाम के ज्ञाता हो, परंतु तुम न आश्रम हो न वर्ण और न नाम हो, यह सब कल्पित हैं और तुम सत्य हो अतः तुम्हारा इनसे कोई सम्बन्ध नहीं।

रक्त[1] न श्वेत[2] न कारो[3] ॥७॥
मैं, तू इह, ओह अन्तर बाहिर,
एक दो तीन न चारो ॥८॥
जन्म[4] अरु मरण पिपासा क्षुधा,
हर्ष शोक से न्यारो ॥९॥
तीन काल[5] तीनों अभिमानी[6] ,
तीन देश[7] उजियारो ॥१०॥
बाल न वृद्ध कुमार न योवन,
रूप न रेख अकारो ॥११॥

---

(१) लाल (२) सफेद (३) काला आदिक, इन सब रंगों में से तुम नहीं हो क्योंकि तुम निराकार और शरीर के सम्बन्ध से भिन्न हो और यह सब रंग शरीर के हैं।

(४) यह षट्ऊमा धर्म हैं जिसमें जन्म और मरण स्थूल शरीर के धर्म हैं, प्यास और भूख प्राण के धर्म हैं हर्ष और शोक मन के धर्म हैं तुम स्थूल शरीर, प्राण, और मन से न्यारे हो।

(५) जाग्रत, स्वपन और सुषुप्ति यह तीन काल हैं (६) विश्व जाग्रत का अभिमानी, तेजस स्वपन का अभिमानी और प्राज्ञ सुषुप्ति का अभिमानी यह तीन अभिमानी हैं।

(७) ज़ाग्रत अवस्था में विश्व का देश नेत्र है स्वपन में तेजस का देश कंठ है सुषुप्ति में प्राज्ञ का देश हृदय है यह तीन देश हैं इन तीनों काल, तीनों अभिमानी और तीनों देशों के तुम प्रकाशक हो इसलिए इनसे न्यारे हो।

जन्म[1] न अस्ति, परिणाम न वृद्धता,
नहीं क्षय नास विकारो ॥१२॥
बंध[2] मुक्त दोऊ से न्यारे,
नहीं उरवार[3] न पारो[4] ॥१३॥
सत्य स्वरूप स्वतः[5] परकाशी,
चेतन रूप अपारो ॥१४॥
सत्ता-मात्र[6] शून्य से सूना[7],
चिद्घन परम प्यारो ॥१५॥

---

(१) यह षट् विकार स्थूल शरीर के हैं। जन्म अर्थात् गर्भ में आना। अस्ति अर्थात् गर्भ से निकल कर प्रकट होना। परिणाम अर्थात् बालक अवस्था, वृद्ध अर्थात् युवावस्था, और क्षय अर्थात वृद्ध अवस्था, नाश अर्थात मृत अवस्था, इन छः विकारों से रहित निर्विकार हो।

(२) बन्ध, जन्म, मरण, पुण्य, पाप, सुख दुःख लोक और परलोक में गमनागमन इन सबसे न्यारे हो, सत्य रूप होने से, जब बंधन से रहित हो तो मुक्त होने से भी न्यारे हो।

(३) आदि (४) अन्त तुम्हारा आदि और अन्त भी कोई नहीं। (५) अपने प्रकाश द्वारा प्रकाशमान। (६) केवल सत्ता स्वरूप, सर्व बुद्धि कल्पित विशेषणों से उल्लंघत (७) शून्य से रहित शून्य के प्रकाश हो। शून्य जड़ है अपने आपको प्रकाश नहीं कर सकता और तुम चिद्घन अथात् चैतन मात्र अनुभव रूप हो अनुभव शून्य का प्रकाशक होता है, अनुभव का अनुभव दूसरा नहीं होता। इसलिए तुम आत्ममात्र परमानन्द रूप अपने आप को प्यारे हो।

आतम तत्व अकाम[1] अजूनी[2],
अचल[3] स्वरूप तुम्हारो ॥१६॥
नित्य प्राप्त[4] नित्य मुक्त[5] सनातन[6],
नित्य परपंच अधारो[7] ॥१७॥
हेमराज चिद्वप्[8] चिद्रूपं,
सत्-चित्[9] आनन्द सारो ॥१८॥

—:o:—

(१) कामना से रहित हो (२) जन्म से रहित हो। (३) क्रिया से रहित हो (४) सदा आत्म स्वरूप होने के कारण अपरोक्ष रूप हो। (५) अधिष्ठान होने से सर्व कल्पना से रहित हो। (६) काल की अपेक्षा से रहित हो (७) आधार रूप होने से प्रपंच कल्पना से रहित हो (८) चैतन्य रूप होने से चैतन्य शरीर हो।

(९) सत्य अर्थात् त्रिकालाबाध। चित् अर्थात् स्वयं प्रकाश। आनन्द अर्थात् सुख रूप। सारो अर्थात् तत्व स्वरूप जो तुम हो।

हेम का अर्थ स्वर्ण है। स्वर्ण शुद्ध प्रकाश रूप और सुन्दर होता है। शुद्ध अर्थात् सत। प्रकाशक अर्थात् चित। सुन्दर अर्थात् आनन्द। राज कहिए विराज मान। तात्पर्य यह है कि आपने सत चित आनन्द में विराजमान हो।

पौरी ॥३॥

साधो देह अभिमान[1] हत्यारा[2] ॥१॥ रहाउ ।

बालक यौवन वृद्ध सिंहारा,
पंडित भूपति मारा ॥२॥
देह अभिमानी महा अज्ञानी,
अपना आप बिसारा ॥३॥
मात पिता गुरु को नहीं जाने,
अभिमानी मतवारा[3] ॥४॥
सब से अधिक आपको माने,
अभिमानी मतमारा[4] ॥५॥
जो कोई तांकी बात न माने,
क्रोध करे अति भारा ॥६॥
निन्दा सुन कोपे हृद अन्तर,
भड़क भड़क तन जारा ॥७॥

---

(१) "देहोहं" अर्थात मैं शरीर हूँ, बड़ा नाम धारी हूँ, ब्राह्मण या क्षत्रिय हूँ। ग्रहस्थ हूँ, सन्यासी हूँ, सुन्दर हूँ, बलवान हूँ, बुद्धिमान हूँ, प्रतापवान हूँ, उत्तम कुल वाला हूँ, इत्यादि अभिमान यह देह अभिमान हैं, (२) बड़ा जालिम अर्थात् महा उपघातक है। क्यों कि जीव के सत्य, चित्त आनन्द रूप को आच्छादित कराके असत्य दुःखरूप देह का निश्चय कराता है जिससे जीव व्यर्थ दुःख और क्लेश भोग रहा है। (३) अभिमान रूपी मद में मस्त (४) बुद्धिहीन ।

सुने न माने उत्तम शिक्षा,
मूरख मुग्ध गंवारा ॥८॥
जो जो कर्म करे अभिमानी,
सो सो बांधन हारा ॥६॥
देह अभिमान मूल बंधन को,
जिह बांध्यो संसारा ॥१०॥
जब लग देह अभिमान हृदय में,
होय न हरि दीदारा ॥११॥
धार विवेक[1] अभिमान त्याग्या,
आतम तत्व संभारा ॥१२॥
हेमराज भवसागर तरया,
पाया मोक्ष द्वारा ॥१३॥

—:o:—

(१) मिथ्या और सत्त का विचार करके देह को मिथ्या जान और आत्मा को सत्य निश्चय करके देह अभिमान को त्याग दिया देह अभिमान को त्यागते ही भवसागर अर्थात् संसार रूपी सागर पार कर के सत चित् आन्नदस्वरूप में स्थिति रूप मोक्ष को प्राप्त किया।

पौरी ॥४॥

मेरे मन सत्य असत्य विचार ॥१॥ रहाउ।

देह असत्य मलीन[1] अमंगल[2],
मिथ्या[3] जान बिसार ॥२॥
आतम सत्य पवित्र अजूनी,
मंगल रूप संभार ॥३॥
जब लग चित चितवे मिथ्या कों,
तब लग है संसार ॥४॥
मिथ्या भाव गयो जाँ चित से,
निश्चय आतम सार ॥५॥
देह अभिमान सहित जो करिए,
सो सो बांधनहार ॥६॥

---

(१) मैली; और अपवित्र है क्योंकि हाड़, मांस, नाड़ी, त्वचा, रोम, रक्त, वीर्य, कफ, पित्त, विष्टा, मूत्रादिक द्वारा निर्मित है, और तुम्हारे लिए ग्लानता और अशुद्धता का निमित्त है (२) भयंकर और त्यागने योग्य (३) सत्य असत्य से विलक्षण है क्योंकि इससे व्यवहार सिद्ध होता है इसलिए सत्य है, और श्वास श्वास पर नाश रूप है इसलिए असत्य है। इसलिए न सत्य है, न असत्य है। क्या है, कुछ भी नहीं, भ्रांति है। इसलिए इस देह को बिसार दे।

देह[1] अभिमान मिटे जिस तन से,
पाईये मोक्ष द्वार ॥८॥
कर्म सहित चौदस[2] इन्द्रियन को,
मिथ्या जान असार ॥९॥
इन्द्रियन का परकाशक आतम,
साक्षी रहित विकार ॥१०॥
इन्द्रियन से न्यारा नित-सूक्ष्म[3],
सत्-चित् आनन्द सार ॥११॥
बिन आतम जो जो चित चितवे,
सो सो बेग बिसार ॥१२॥

---

(१) मिथ्या देह अभिमान (२) पांच ज्ञान इन्द्रियाँ, पाँच कर्म इन्द्रियाँ और चार अन्तःकरण, यह चौदह इन्द्रियाँ हैं और चौदह ही इनके कर्म हैं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध यह पाँच ज्ञान इन्द्रियों के कर्म हैं। वचन, लेना-देना, चलना, मूत्र-त्याग-रति भोग, मल-त्याग यह पाँच कर्म इन्द्रियों के कर्म हैं संकल्प, विकल्प चितवना, निश्चय और अहंता यह चार अन्तः-करण के कर्म हैं। इन इन्द्रियों को चौदह कर्मों सहित मिथ्या और त्यागने योग्य जानो क्योंकि इनके कर्म एक रस नहीं रहते इसलिए मिथ्या हैं (३) दृष्टि से अगोचर।

जाग्रत[1] स्वप्न[2] सुषुप्ति[3] तीनों,
आवें बारम्बार ॥१२॥
जो वस्तु इक रस नित्य स्थित,
हेमाँ सो है सार ॥१३॥

पौरी ॥५॥

साधो सुख दुःख दोऊ बिसारो ॥१॥ रहाउ ।

हर्ष शोक व्यापे नहीं हृद में,
समता मुदिता[4] धारो ॥२॥
सुख में आय चित्त जब फूले,
अपना आप संभारो ॥३॥

(१) जिसमें बैयालीस वस्तुएं अर्थात् चौदह इन्द्रियाँ, चौदह देवता और चौदह विषय यह त्रिपुटी मिलकर काम करें वह ज़ागृत अवस्था है। (२) जिसमें उन्नीस वस्तुएं अर्थात् पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ, पाँच कर्म इन्द्रियाँ, पाँच प्राण और चार अन्तःकरण कर्म करें वह स्वप्न अवस्था है। (३) जिसमें केवल अज्ञान हो सुषुप्ति अवस्था है यह तीनों अवस्थाएं बार बार आती जाती हैं और एक अवस्था में बाकी दो का अभाव होता है इसलिए यह तीनों अवस्थाएं मिथ्या हैं। हे मन, इनको भी त्याग कर जो वस्तु इन तीनों अवस्थाओं में एकरस रहती है वही सार-रूप है। हे मन, उसी में स्थित रहो (४) प्रसन्नता।

जब ही दुःख तपावे चित को,
तब ही आप विचारो[1] ॥४॥
सुख दुःख दोऊ मन के धर्मा,
आतम इनसे न्यारो ॥५॥
शत्रु मित्र समान पछानो,
मान अपमान सहारो ॥६॥
निंदा स्तुति दोऊ त्यागो,
मत्सर[2] मोह निवारो ॥७॥
देह चिंतन से मन को रोको,
आतम तत्त्व चितारो ॥८॥
निशि-वासर अन्तर्मुख[3] होवो,
मूल न चित पसारो ॥९॥
जो जो वस्तु दिखाई देवे,
पूरण ब्रह्म निहारो ॥१०॥
समदर्शी सन्तुष्ट विराजो,
हेमाँ मन को मारो ॥११॥

—:०:—

(१) दुःख सुख रूप विकार से रहित, परमानन्दस्वरूप अपनी आत्मा को विचारो (२) मिथ्या अहंकार (३) आत्म चिंतन करके चित्त को आत्माकार रखो।

पौरी ॥६॥ काफ़ी

तेरे दिल विच महरम[1] यार सखी,
तूँ अपना आप विचार सखी ॥१॥ रहाउ।

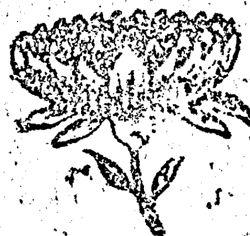
तूं नहीं देह न देह के धर्मा,
तूं नहीं प्राण, न इन्द्रिय कर्मा,
तूं नहीं चितवन संशय परमा[2],
तूं साक्षी रहित अकार सखी ॥२॥

तूं नहीं नाम न आश्रम वर्णा,
तूं नहीं शीश, न नेत्र, न कर्णा,
तूं नहीं बाल न वृद्ध, न तरुणा[3],
तूं सूक्ष्म रहित विकार सखी ॥३॥

तूं नहीं अन्दर, तूं नहीं बाहिर,
तूं नहीं बातिन[4] तूं नहीं ज़ाहर[5],
तूं नहीं जाहिल[6], तूं नहीं माहिर[7],
तूं केवल आतम सार सखी ॥४॥

(१) सत्चित्त-आनन्द स्वरूप आत्मा, चैतन्यदेव, (२) बुद्धि। (३) युवा, जवान (४) गुप्त (५) प्रकट (६) मूर्ख (७) बुद्धिमान।

तूं अक्रिय निर्मल निजरूपा,
स्वयं प्रकाशी महा अनूपा,
तूं सत् चित्त आनन्द स्वरूपा,
तूं दुई दा घुँड उतार सखी ॥५॥
यार अभेद तूं भेद पछानें,
प्राप्त को अप्राप्त मानें,
आतम को तूं न्यारा जानें,
तूं संशय सकल बिसार सखी ॥६॥
तूं भेद दा परदा फाड़ सखी,
तूं ज्ञान दे नैन उघाड़ सखी,
हेम्माँ आप नूं यार निहार सखी,
हो निश्चल पाँव पसार सखी ॥७॥



प्रेम घाट ॥ ११ ॥

पौरी ॥१॥

प्राणी प्रेम पदारथ पावो ॥१॥ रहाउ।

निशि-वासर गुण गावो हरि के,
क्षण क्षण राम ध्यावो ॥२॥
जहां देखो तहां गोविंद पेखो,
दुतिया भाव मिटावो ॥३॥
वैर विरोध बखीली निन्दा,
हिंसा मान भुलावो ॥४॥
धन संपति का मान त्यागो,
निर्धन नाहीं दुःखावो ॥५॥
कुटिल[1] कठोर[2] कटुक[3] बाणी कर,
मूल न काहे बुलावो ॥६॥
आए को आदर नित देवो,
हस रस तांहि रिझावो ॥७॥
भूखे अन्न प्यासे पानी,
नांगे ओढ़ ओढ़ावो ॥८॥

---

(१) फरेब से मिली हुई (२) सख्त (३) कड़वी।

मीठा वचन सबन सों बोलो,
भक्ति भाव चित लावो ॥९॥
कहे हेसाँ आतम पूजन कर,
आतम मांहि समावो ॥१०॥

पौरी ॥२॥

प्राणी राम नाम रस पीजे ॥१॥ रहाउ ।

मन मटकी अभ्यास मधानी,
नाम का दूध[1] मथीजे ॥२॥
मथ-मथ गो-रस[2] ज्ञान कढ़ीजे,
छक छक मुक्ति लहीजे ॥३॥
राम रमैया घट घट वासी,
झुक झुक शीश निवीजे ॥४॥
जहां जहां मन का फुरना जावे,
तहां तहां राम दिखीजे ॥५॥
मन पत्थर हरि नामा चकमक,
इक चित होय मथीजे[3] ॥६॥

---

(१) नाम अर्थात् "ओंकार" को भली प्रकार मथन अर्थात उसका बारम्बार उच्चारण करो (२) माखन (३) जैसे पत्थर को चकमक के साथ घिसने से अग्नि प्रगट होती है तैसे मन को परमात्मा से तद्रूप करने से तत्व ज्ञान का प्रकाश होगा।

मथ मथ ज्ञान अगनि परकाशे,
संचित कर्म[1] जलीजे ॥७॥
सर्व पदारथ हरि का दर्पण,
रुचि रुचि दर्शन कीजे ॥८॥
अंतर बाहिर राम बिराजे,
भेद प्रच्छेद मिटीजे ॥९॥
जहां जहां दृष्टि पड़े सो रामा,
पेख पेख मन भीजे ॥१०॥
पूरण राम रम्यो जग मांहि,
मैं तूँ भाव भुलीजे ॥११॥
देह अभिमान सर्पवत् मारो,
हरि भंडार लुटीजे[2] ॥१२॥
वर्णाश्रम अभिमान त्यागो,
हरि स्मरण सुख लीजे ॥१३॥
गुप्त न प्रगट न दूर न नेड़े,
आतम रूप पतीजे ॥१४॥
ऊपर नीचे, आगे पीछे,
इह ओह राम दिखीजे ॥१५॥

(१) कर्मों का समूह जिनका फल अभी भोगना है।
(२) देह अभिमान रूपी सर्प आतम ब्रह्म ज्ञान के भंडार पर बैठा है इसलिए देह अभिमान दूर करो जिससे ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति होवे।

जग पुस्तक[1] बहु भांति विचारयो,
एको राम लखीजे ॥१६॥
राम रम्यो हेमाँ अभ्यन्तर[2],
क्या लीजे क्या दीजे ॥१७॥

पौरी ॥३॥

मेरे मना राम नाम रस पी ॥१॥ रहाउ।

शरद्धा सूई सतगुरु तागा,
राम चंदोआ सी ॥२॥
जीवत मरो ज्ञान रस भुञ्चो,
मर के बहुरो जी ॥३॥
अमर होय विगसो नित्य हेमाँ
बहुर न दुखिया थी ॥४॥

---

(१) यह जगत पुस्तक समान है, जिसके आकाश, पवन, अग्नि, जल, पृथ्वी पांच पत्र हैं। एक एक जाति की सृष्टि एक एक पत्र पर अनन्त फाली हैं। एक एक आकार एक एक अक्षर है। वेद शास्त्र भी इस पुस्तक का एक अक्षर है। इस जग पुस्तक को भली प्रकार विचार करने से यह प्रतीत होता है कि एक ही वस्तु अपने आप में स्थित है वह वस्तु 'राम' कही जाती है। राम का अर्थ पूर्ण है पूर्ण शब्द भी सापेक्षक है जब दूसरा ही नहीं तो कौन किस में पूर्ण और अपूर्ण ? इसलिए एक ही राम अपने में स्थित है। (२) बाहर और अन्दर।

पौरी ॥४॥ काफ़ी

इश्क[1] इलाही[2] औखा[3] पैंडा[4]
जीवंदियां[5] मर वंजरा यारा ॥१॥ रहाउ।

अनजाणां[6] दे पत्थर वट्टे,
परवत वांगू झल्लन यारा ॥२॥
बिना[7] रफ़ीक ते बिना सहारे,
सूरज वांगू चल्लन यारा ॥३॥
नंग नामूसते[8] मज़हब मज़ाहिब,
अड वांगू टप वंजन यारा ॥४॥
अक्ल[9] हया[10] ते शरम[11] रियादी[12],
पंड सिरां तों सुट्टन यारा ॥५॥

---

(१) प्रेम (२) परमात्मा (३) कठिन (४) मार्ग (५) देह के होते हुए देह; अभिमान का त्याग करना (६) अज्ञानिओं के कुबोल अथवा दुर्वचनों को पर्वत की न्याई सहना। अर्थात् उनके वचनों को अर्थ रहित जानकर अपने धैर्य को न त्यागना।

(७) दूसरे के संबंध और सहारे से रहित सूर्य की न्याई प्रेम के मार्ग में चलना। जैसे सूर्य आकाश पर अकेला चलता है वैसे प्रेम के मार्ग में मोह रहित होकर अपनी प्रीति को पूरा निभाना (८) नंग अर्थात् अपमान और नामूस अर्थात् मान। मज़हब-मज़ाहिब अर्थात् वर्ण, आश्रम, मत, भेष समाज-मार्ग के अभिमान को तुच्छ जानकर मन से भुला देना (९) बुद्धि चातुर्य सांसारिक चतुरता (१०) कुल-लज्जा (११) लोक लज्जा (१२) दंभ इत्यादि स्वभावों को भार जानकर त्याग देना।

भेडा[1] चाल ते कम जनानां[2],
दोहां थीं अखीं नूटन यारा ॥६॥
सिर[3] ते भार मुहब्बत वाले,
बेसिर होकर झल्लन यारा ॥७॥
लज्ज कुलज्ज ते भुख नंगेपा,
अपने नाल सहारन यारा ॥८॥
शमशेरां दी बारिश[4] कोलों,
सिर को मूल न फेरन यारा ॥९॥
बिना शराबों[5] खीवा थीवन,
बिना हयाती जीवन यारा ॥१०॥

(१) लोकाचार अर्थात् देखा-देखी पर चलना (२) निर्बलता अर्थात् विचार रूपी बल को त्याग कर दूसरों के आधीन रहना, इन दोनों स्वभावों से आंखे मूँद लो अर्थात् इनका त्याग करो, (३) जो जो दुःख और क्लेश प्रेम के मार्ग में आएं उन सबको धैर्यवान और सहनशील होकर सहारना (४) प्रेम मार्ग पर चलने वाले से संसारी लोग द्वेष करते हैं। भेदवादी सशस्त्र राजा और द्वेषी लोग द्वेष के आधीन तलवार से शरीर को काटें। कारागार में डालें। फाँसी चढ़ाने अथवा कोई और कष्ट दें उनको प्रसन्न चित्त हो सहारना, परन्तु दुख देने वाले से न द्वेष करना न अपने प्रेम का त्याग करना। (५) शराब के बिना केवल परमात्मा के प्रेम में "खीवा" अर्थात् मतवाला रहना और 'विना हयाती जीना' अर्थात् शरीर के भाव से रहित होकर केवल आत्मरूप होकर रहना।

हेमराज[1] इह इश्क इलाही,
मर के बहुरो जीवन यारा ॥११॥

पौरी ॥५॥ काफी

वाह वाह, इश्क मेरे घर आया है;
थय्या थय्या नाच नचाया है ॥१॥ रहाउ ।

जद अन्दर आए इश्क मियां,
पुर पुर विच धुम्मां आन पईयां,
सब सइयां घर नूँ छोड़ गईयां,
इक्को इश्क मेरे मन भाया है ॥२॥
अवल हिरस[2] हवा[3] नूँ दूर कीतुस,
दूजा अकल[4] हया[5] चकचूर कीतुस,
त्रिजा खौफ[6] रिया[7] नूँ दूर कीतुस,
चौथा शिरकदा[8] नाम गंवाया है ॥३॥

(१) स्वामी हेमराज जी कहते हैं कि जो इस प्रकार अनन्य प्रेम में मतवाला होता है वह शरीर होते ही मुक्त हो जाता है और जीव भाव को त्याग कर परमब्रह्म भाव को प्राप्त होता है। मृत्यु से रहित होकर अमर पद को प्राप्त होता है। देह अभिमान का त्याग ही मरन है और अभिमान त्याग से सत्-चित् आनन्द की प्रतीति ही जीवन है। धीरजमान जिज्ञासु ऐसे उत्तम पद को जो परमानन्द-स्वरूप है अपने प्रेम और श्रद्धा से प्राप्त करता है। (२) लोभ (३) मन की अभिलाषा (४) चतुराई (५) लज्जा (६) भय (७) दंभ (८) भेद।

जद इश्क ने दिल विच वास कीता,
रग रग दे विच परकाश कीता,
परदा भेद वाला विचों नास कीता,
घुँघट खोल के नाच नचाया है ।।४।।
कई इश्क ने मार के चूर कीते,
कई चाढ़ सूली मन्सूर कीते,
कई पीर वली मशहूर कीते,
हुणा मैं घर फेरा पाया है ।।५।।
तन बादल[1] वांग उड़ाया है,
दो तीन[2] दा नाम गंवाया है,
आशिक माशूक भुलाया है,
इक अपनां आप लखाया है है ।।६।।
वाहदत कसरत विच समानी है,
कसरत वाहदत होके भानी[3] है,
मैं तूँ दी भुली कहानी है,
हैमाँ आप में आप समाया है ।।७।।

(१) परम प्रकाशमय परमात्मा के सामने देह अभिमान बादलवत, पटल है अनन्य प्रेम ने इस पटल को निवृत कर दिया है २) दो कहिये मैं तूँ आदिक द्वंदभेद और तीन कहिये प्रीतम प्रेमी और प्रेम आदि त्रिपुटी का अनन्य प्रेम में अभाव हो जाता है (३) वहिदत कहिये एकता कसरत कहिये अनेकता में समाई है अर्थात् प्रेम की गाढ़ता से एक और अनेक में भेद नहीं रहा, जल, तरंगवत दोनों एक हैं ।

आत्मचिन्तन रूप निदि-ध्यासन घाट ॥१२॥

पौरी ॥१॥

साधो मन का वेग[1] निवारो ॥१॥ रहाउ ।

युक्ति बिना मन वश नहीं आवे,
केतक हठ तप धारो ॥२॥
देस एकान्त धरो दृढ़ आसन,
ओ३मकार उचारो ॥३॥
सिमर सिमर निश्चलता पावो,
चंचल भाव निकारो ॥४॥
सिमरण ते जब मन उकलावे[2],
सत्संगत पग धारो ॥५॥
श्रद्धा सहित सुनो ब्रह्म विद्या,
संशय सकल निवारो ॥६॥
सुनकर मनन करो हृद अन्तर,
नित्य अनित्य विचारो ॥७॥

---

(१) संकल्प-विकल्प रूपी प्रवाह (२) उदासीन हो जाए ।

नित आतम सों मन को जोड़ो,
देह अनित्य बिसारो ॥८॥
दीरघ काल निरन्तर इस विधि,
निदिध्यासन दृढ़ धारो ॥६॥
निदिध्यासन से मन वश होवे,
हेमाँ जय जयकारो ॥१०॥

—:o:—

पौरी ॥२॥

मेरे मना, अन्तर्गत[1] सुख पाय ॥१॥ रहाउ ।

अन्तर्गत बिन सुख नहीं रंचक,
मुनिवर[2] भूप सुनाय ॥२॥
ब्रह्मलोक लौं सुख सब मिथ्या,
विषवत् जान भुलाय ॥३॥
देह असत्य अनातम[3] दुःखमय,
तांसों प्रीत हटाय ॥४॥
हृद अन्तर शान्तातम पूरण,
हेमाँ निशि-दिन ध्याय ॥५॥

—:o:—

(१) आतम में स्थित होकर (२) मुनिश्वरों में जो श्रेष्ठ और पूज्य हैं (३) जड़ ।

पौरी ॥३॥

मेरे मना; सत चित आनन्द ध्याय ॥१॥ रहाउ।

देह असत्य अनातम दुःखमय,
निश्चय जान भुलाय ॥२॥
विषयन सहित सर्व इन्द्रियन ते,
चित को वेग छुड़ाय ॥३॥
चिंतन[1], मनन, अहंता निश्चय,
आतम भेंट चढ़ाय ॥४॥
अहंग्रह[2] ध्यान धरो निशि-वासर,
द्वैत-भाव[3] बिसराय ॥५॥
त्याग विक्षेप[4] नींद[5] आलस[6] भय[7],
अचल[8] समाधि लगाय ॥६॥

---

(१) सत् चित् आनन्द आत्मा का चिंतन ? अहंता, और निश्चय कर चारों अन्तःकरण की वृतियों से सत्-चित्-आनन्द आत्मा के ध्यान में मग्न रहना (२) अहंग्रह ध्यान अर्थात् "मैं सत्-चित् आनन्द हूँ, इस रीति से निरंतर ध्यान करना (४) भेद को भावना चित्त से भुलाओ अर्थात ध्येय आत्मा को कदाचित अपने से भिन्न न जानो; सदा अपना आप जान कर ध्यान करो। (४) चित्त की चंचलता (५) चित्त की लयता (६) चित्त की शून्यता अथवा असावधानता (७) भेद बुद्धि से चित्त का क्षोभ (८) एकाग्र चित्त होकर।

रंचक मात्र द्वैत नहीं भासे;
निरबाणी पद पाय ॥७॥
सत् चित आनन्द पूरण हेमाँ,
परमानन्द समाय ॥८॥

पौरी ॥४॥

साधो मन आतम संग जोड़ो ॥१॥ रहाउ ।

विषयन सहित सर्व इन्द्रियन का,
नेह यतन कर तोड़ो ॥२॥
धन संपति गृह सुत[1] वनिता[2] की,
अहंता ममता छोड़ो ॥३॥
काम क्रोध मत्सर पर-निन्दा,
हिंसा से मन मोड़ो ॥४॥
देहाकार वृत्ति जब होवे,
बलकर तांको होड़ो ॥५॥
धार विवेक असार त्यागो,
सब का सार निचोड़ो ॥६॥
सार पदारथ सब का आतम,
तांसो वृत्ति को जोड़ो ॥७॥
आतम संग वृत्ति होय आतम,
हेमाँ बन्धन तोड़ो ॥८॥

(१) पुत्र (२) स्त्री- पत्नी ।

पौरी ॥५॥

मेरे मना, आतम तत्व संभार ॥१॥ रहाउ ।

अचल[1] अभेद[2] अखंड[3] अनामय[4],
सत चित आनन्द सार ॥२॥
देह प्राण इन्द्रिय मन चित बुद्धि,
मिथ्या जान बिसार ॥३॥
विषय चितवना निशि दिन त्यागो,
पूरण ब्रह्म निहार ॥४॥
काहे सोचो काहे चितवो,
शब्दमात्र[5] संसार ॥५॥
चित का चितवन सकल त्यागो,
शेष[6] रहे सो धार ॥६॥
बुद्धि पर्यंत प्रपंच बिसारो,
बुद्धि से परे विचार ॥७॥
सब द्वन्दों[7] की संधि जो ही,
सो चिद्घन चिद्सार ॥८॥

(१) क्रिया से रहित (२) समान, भेद से रहित (३) विभाग रहित (४) दुःख से रहित (५) संसार केवल नामरूप है। (६) बाकी (७) सर्व भेदों के मध्यस्थ होकर सर्व भेदों को जो प्रकाश देता है। वह चेतन घन और चेतन तत्व है।

सब में सब सा सब से न्यारा,
सब कुछ सब आधार ॥९॥
अन्तर्मुख[1] होय अमृत अचवो,
बाहिर्मुखता[2] डार ॥१०॥
नित्य संतुष्ट[3] रहो मन मांहि,
पावन[4] रहित विकार ॥११॥
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तुर्या,
अपना आप निहार ॥१२॥
सदा आनन्द परम रस भींनो,
हेमाँ भुञ्चो सार[5] ॥१३॥

—:०:—

पौरी ॥६॥

साधो आतम तीर्थ न्हावो ॥१॥ रहाउ ।

कशमल[6] पाप उतारो मन से,
मुक्ति पदारथ पावो ॥२॥
देह अभिमान मूँड को मूँडो,
गुरु चरणी चित लावो ॥२॥

(१) वृत्ति को आत्माकार करके आत्मानन्द का अनुभव करो (२) देहाकार वृत्ति का त्याग करो (३) तृप्ति (४) पवित्र, देह अभिमान से रहित (५) 'भुञ्चो सार' का अर्थ है कि आपको सत-चित आनन्द आत्मतत्व निश्चय करो (६) पाप रूपी मैल ।

श्रद्धा गाय प्रेम वत्सल[1] संग,
गुरु की भेंट चढ़ावो ॥४॥
अपना आप दक्षिणा करके,
गुरु उपदेश कमावो ॥५॥
शरवण मनन निदिध्यासन डुबकी,
बारम्बार लगावो ॥६॥
ताप[2] क्लेश[3] दोष[4] से मुक्ते,
शांति सहज घर आवो ॥७॥
क्रोध लोभ माया[5] ममता को,
हाथों हाथ लुटावो ॥८॥
सत्य संतोष विचार मित्रता,
क्षमा श्रृंगार बनावो ॥९॥
ध्यान तिलक ले मन को शोधो,
अंजन ज्ञान लगाओ ॥१०॥
कंठी समता माला मुदिता,
डाल गले सुख पावो ॥११॥
हेमराज सर्वातम मेला,
पेख पेख बिगसावो[6] ॥१२॥

---

(१) बछड़ा (२) ताप तीन हैं, आध्यात्मिक, अधिदैविक, और अधिभौतिक ! (३) क्लेश पांच हैं : राग, द्वेष, अविद्या, असमता, अभिनिवेश (४) दोष पांच हैं काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार (५) छल, फरेब (६) प्रसन्न होवो ।

पौरी ॥७॥

साधो आतम पूजन कीजे ॥१॥ रहाउ ।

हृदय गुहा[1] में आतम पूर्ण,
आतम होय लखीजे ॥२॥
देह प्राण इन्द्रिय मन चित बुद्धि,
मिथ्या जान भुलीजे ॥३॥
सुन्न[2] मंडल में स्थित होकर,
निशि-दिन ध्यान धरीजे ॥४॥
जाग्रत[3] अन्त आदि स्वप्ने को,
आतम जान भजीजे ॥५॥
सत[4] चित[5] आनन्द[6] पूर्ण[7] अक्रिय[8],
निर्भय[9] फूल[10] चढ़ीजे ॥६॥

(१) गुफा, गोप स्थान (२) बाहर कर्म और अंतर मनोराज से रहित जो केवल ज्ञानमात्र अवस्था है वह आत्मा है, उसी में स्थित रहो (३) मन चित्त बुद्धि अहंकार से रहित होकर (४) त्रिकालाबाध (५) स्वयं प्रकाश (६) दुःख सम्बन्ध से रहित (७) निरपेक्ष व्यापक (८) क्रिया-शून्य (९) अद्वितीयता के कारण भय से रहित (१०) इन विशेषणों द्वारा आतम देव का चिन्तन करें ।

समता[1] मुदिता[2] सत्यता[3] विद्या[4],
आतम भेंट चढ़ीजे ॥७॥
प्रेम सनेह[5] बुद्धि बाती कर,
दीपक ज्ञान जलीजे ॥८॥
चौदह भुवन[6] सर्व सामग्री,
धूप अस्थानी कीजे ॥९॥
चिंतन[7] कथन[8] परस्पर[9] बोधन,
ताल मृदंग बजीजे ॥१०॥
नख-शिख पूर्ण एको आतम,
ऐसी आरती कीजे ॥११॥
जो जो वस्तु दृष्टि आवे,
झुक झुक शीश निवीजे ॥१२॥

(१) बुद्धि कल्पित भेद से रहित अवस्था (२) प्रसन्नता (३) एकरसता (४) ब्रह्मी तथा लक्ष्मी आदि यह चार पटरानियाँ आत्मदेव को भेंट चढ़ावें अर्थात् सदा इन स्वभावों को बरतें। (५) घृत (६) चौदह भुवन और सर्व पदार्थ जो चौदह लोकों में है उन सबको कल्पित जान कर अधिष्ठान आत्मा में लीन करें।

(७) चित्त-द्वारा बारम्बार आत्मदेव का चिंतन करें। (८) वाणी द्वारा आत्मदेव का चिंतन करें। (९) एक दूसरे को आत्म-विद्या समझाएं इस प्रकार अभ्यास का ताल-मृदंग नित्यप्रति आत्मदेव के आगे बजाते रहें।

जहां जहां मन का फुरना जावे,
आतम राम लखीजे ॥१३॥
अनुभव जोत अखण्ड अनामय,
हेमाँ निज फल लीजे ॥१४॥

—:o:—

पौरी ॥८॥

प्राणी; ज्ञान समाधि[1] लगावो ॥१॥ रहाउ ।

पांच[2] कोष से न्यारा करके,
अपना आप ध्यावो ॥२॥

---

(१) ज्ञान के आसरे चित्त को स्थिर करो। (२) पांच कोष यह हैं:-अन्नमय कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष, विज्ञानमय कोष, आनन्दमय कोष। कोष परदे को भी कहते हैं। यह चेतन-आत्मा इन पांच परदों द्वारा आच्छादित होकर, प्रतीत नहीं होती प्रथम परदा अन्नमय अर्थात् स्थूल शरीर है। दूसरा परदा प्राणमय अर्थात् पांचों प्राण और पांच कर्म इन्द्रिय हैं। तृतीय परदा मनोमय अर्थात् मन और पांच ज्ञान इन्द्रिय हैं। चतुर्थ परदा विज्ञानमय अर्थात् बुद्धि और पांच ज्ञान इन्द्रिय हैं। पंचम परदा आनन्दमय अर्थात् विषयानन्द अथवा निद्रानन्द है इन पांचों से आत्मा साक्षी होने के कारण न्यारा है।

तीन[1] शरीर अवस्था[2] तीनों,
सीप[3] रूप[4] ज्यों पावो ॥३॥
तीनों गुण तीनों अभिमानी[5],
तीनों काल[6] भुलावो ॥४॥
अहं भाव चितवो नहीं रंचक,
शान्ति सरोवर न्हावो ॥५॥
तत् त्वम् असि[7] अभेद पछानो,

---

(१) तीन शरीर यह हैं:—स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर, और कारण शरीर (२) तीन अवस्था यह हैं:—जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति इन तीनों शरीरों और तीनों अवस्थाओं को भ्रमरूप जानों जैसे सीपी के अज्ञान से रूप प्रतीत होता है और वह भ्रमरूप हैं, वैसे ही आत्मा के अज्ञान से शरीर और अवस्था प्रतीत होते हैं इसलिये भ्रमरूप हैं (३) सीप, अर्थात् सीपी (४) रूप (५) तीन अभिमानी यह हैं। विश्व जाग्रत अवस्था में स्थूल शरीर का अभिमानी, तेजस स्वप्न अवस्था में सूक्ष्म शरीर का अभिमानी, प्राज्ञ सुषुप्ति अवस्था में कारण शरीर का अभिमानी, और इनको उपाधिक होने से भुलादो। (६) तीन काल यह हैं:—भूत, भविष्य और वर्तमान अथवा जीव के काल, जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति हैं इनको भी कल्पित जान कर भुलाओ।

(७) तत्व अर्थात् ईश्वर, त्वं अर्थात् जीव, असि अर्थात् है। ईश्वर जीव है। इनमें जो भेद मालूम पड़ता है वह माया और अविद्या की उपाधि से है। उपाधि के त्याग से चेतन सामान्य और एक है इसलिए उपाधि को कल्पित जानकर तत्व और त्वं को एक जानो।

भेद अच्छेद मिटाओ ॥६॥
कर्ता कर्म क्रिया त्रिपुटी से,
वृति को वेग छुड़ाओ ॥७॥
अंतर बाहिर भेद न भासे,
भावाभाव नसायो ॥८॥
निह संशय निरमल निज आतम,
निरवाणी पद पावो ॥६॥
हेमराज समता रस पीवो,
पूरण ब्रह्म समावो ॥१०॥

—:o:—

पौरी ॥६॥

साधो सहज समाधि लगाईये ॥१॥ रहाउ ।

जो जो वरते सत्य कर मानो,
चिंता शोक मिटाईये ॥२॥
पांचों इन्द्रिय[1] वस कर राखो,
इत उत नांही डुलाईये ॥३॥
विषयानन्द असार परिणामी[2],
ब्रह्मानन्द समाईये ॥४॥

(१) श्रोत, त्वचा, नेत्र, रसना, घ्राण इनका अपने विषयों
से हटा...

भूत भविष्यत् चिंता त्यागो,
वर्तमान सुख पाईये ॥५॥
लोक परलोक पछानो कल्पित,
नहीं आईये, नहीं जाईये ॥६॥
सर्वातम दृष्टि सुखदाई,
पेख पेख बिगसाईये ॥७॥
सर्व पदारथ दर्पण[1] हरि का,
रुचि रुचि दर्शन पाईये ॥८॥
अंतर बाहिर ब्रह्म पछानो,
द्वितीया भाव भुलाईये ॥६॥
सहिजे[2] जागो सहिजे सोवो,
सहिजे भोजन खाईये ॥१०॥
सहिजे लीजे, सहिजे दीजे,
सहिजे कार कमाईये ॥११॥
सहिज शिला पर आसन बांधो,
निश्चल ताड़ी लाईये ॥१२॥
अन्तर्मुख होय अमृत अचवो,
भव जंजाल भुलाईये ॥१३॥

(१) नाम रूप के त्याग करने से सर्व पदार्थ ही दर्पण की न्याई अस्ति भांति प्रिय का दर्शन कराते हैं तांते सर्व पदार्थ दर्पण की न्याई कहे हैं (२) अहंकार से रहित।

अंजन[1] मांहि निरंजन[2] रहिए,
मुक्ति पदार्थ पाईये ॥१४॥
बंध मुक्ति दोऊ से मुक्ते,
हेमाँ सहिज[3] समाईये ॥१५॥

पौरी ॥१०॥ काफ़ी

घुंड[4] लाहि के दर्शन पाय कुड़े ॥१॥
तूँ अपना[5] आप गंवाय कुड़े ॥ रहाउ ।

शहु[6] अंदर तूँ भालें बाहिर,
तूँ अंदर दृष्टि लगाय कुड़े ॥२॥

---

(१) माया से रहित, शरीर अभिमान से रहित (२) माया अथवा शरीर संबंध ।

(३) स्वतः स्वभाव (४) परदा जो स्त्रियां मुख पर डालती हैं, उसे उतारकर दर्शन पाले । हे कुड़े, अर्थात् हे बुद्धि पांच कोष से आत्मा को भिन्न करके आत्मा का दर्शन पाले (५) हे बुद्धि, तूं अपना आप गंवा अर्थात् अपना अभाव और अपने अधिष्ठान का भाव निश्चय कर। क्योंकि तूँ सुषुप्ति अवस्था में अपने कारण अज्ञान में लीन हो जाती है। तूँ आप को मिथ्या जानकर अधिष्ठान में अपने आपको लीन कर। तेरा लीन होना ही आत्मदेव का दर्शन है ।

(६) 'शहु' अर्थात आत्मा तेरे अन्दर पूर्ण है और तू बाहर अर्थात् पंचभौतिक पदार्थों को देखती है। अर्थ यह है कि पांच कोषों में आत्मा निश्चय करती है अतः पांच कोषों से वृत्ति हटाकर केवल चेतन मात्र आत्मा में वृत्ति स्थित कर ।

ऐन ग़ैन[1] विच भेद न कोई,
तूँ उतला नुक्ता चाय कुड़े ॥३॥
मेरा तेरा झगड़ा झेड़ा,
तूँ मन थीं सकल भुलाय कुड़े ॥४॥
दिल विच महरम[2] यार प्यारा,
तूँ बाहरों दृष्टि चुराय कुड़े ॥५॥
वाहिद[3], मुतलक़[4], ज़ात[5] रबानी[6],
तूँ दुई[7] दा घुँड उठाय कुड़े ॥६॥

---

(१) ऐन .ग़ैन दो फारसी शब्द हैं। दोनों ही समान हैं केवल एक बिंदु की उपाधि से ऐन ही .ग़ैन पड़ा जाता है यदि बिंदु ऊपर से दूर किया जाय तो दोनों एक रूप है उनमें रंचक मात्र भी भेद प्रतीत नहीं होता। वैसे ही बुद्धि! देह अभ्यास कर तू आत्मा से अपने आपको भिन्न करके विपर्य निश्चय कर रही है। यदि तूं इस भिन्नता को दूर करे तो तू आप ही बोधरूप आत्मा है। भेदरूप निश्चय कर तेरा नाम बुद्धि है और समता के निश्चय से तू ही बोधरूप आत्मा है। अतः ऊपर के बिंदु की भांति जो देह-अभ्यास कल्पित और मिथ्या है इसको तू दूर कर।

(२) हे बुद्धि! परम प्यारा साक्षी रूप आत्मा तेरे अन्दर होकर तेरा आधार है। तू पांच कोषों से अपने निश्चय को हटा! (३) अद्वैत (४) सर्व द्वन्दों से रहित (५) सत्ता मात्र (६) परमात्मा (७) द्वैत, परदा।

घट विच वसदा प्रीतम हेमाँ,
तूँ आपा खोज[1] समाय कुड़े ॥७॥

—:o:—

पौरी ॥११॥

तेरे अन्दर शहु दरयाय कुड़े,
तूँ दिल विच गोता खाय कुड़े ॥१॥ रहाउ ।

शहु[2] हरदम तेरे नाले जाले,
तूँ तन दा मान गंवाय कुड़े ॥२॥
अमृत कुँड[3] हृदय विच पूर्ण,
तूँ पी पी प्यास बुझाय कुड़े ॥३॥
जो कुछ सुनिए अतरी झेड़ा,
तूँ मन थीं सब विसराय कुड़े ॥४॥
भूत भविष्यत कहिन कहानी,
जो वरते सुख पाय कुड़े ॥५॥

(१) तुझमें परम प्रिय रूप आत्मा पूर्ण है । विवेक द्वारा उसको अपना आप निश्चय करके तृप्ति पाओ ।

(२) हे बुद्धि ! तेरा स्वामी सदैव तेरे साथ है किन्तु तेरा स्वरूप है । तूं देह अध्यास को निवृत्त कर (३) सत्-चित् आनन्द आत्मा तेरे अंदर पूर्ण है । उसको अपना आप निश्चय करके तृप्ति पा ।

देख पदार्थ मन नहीं डोले,
तूँ निज आतम तृप्ताय कुड़े ॥६॥
शहु को गैर न भावे मूले,
तूँ अपना आप मिटाय कुड़े ॥७॥
अहंता ममता परदा भारी,
तूँ फाड़ के शहु गल लाय कुड़े ॥८॥
शहु अन्दर शहु बाहर हेमाँ,
तूँ द्वितीया भाव भुलाय कुड़े ॥९॥

पौरी ॥१२॥ काफ़ी

अन्दर देख किहां चिमकारा है,
जिथे सूरज चंद न तारा है ॥१॥ रहाउ ।

उथे धरति अकाश न पानी है,
उथे मारुत[1] , अग्नि न बानी है,
कोई रंग न रूप निशानी है,
उथे केवल ज्ञान उजारा है ॥२॥
उथे जड़ चेतन दा भेद नहीं,
उथे मैं तूँ दा परिछेद नहीं,
उथे पुण्य पाप दा खेद नहीं,
उथे केवल हरि दीदारा है ॥३॥

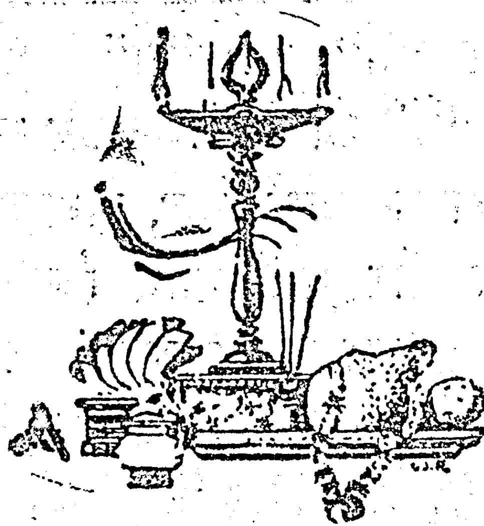
(१) पवन ।

उथे मन चित बुद्धि अहंकार नहीं,
उथे कहिन सुनन दरकार नहीं,
उथे नित्य अनित्य विचार नहीं,
उथे दृश्य न देखनहारा है ॥४॥

इह बाहर जेत पसारा है,
तेरे अन्दर दा लशकारा है,
इह जेतक बहु विस्तारा है,
इक निर्गुण सब आकारा है ॥५॥
जो[1] मैं कूं मैं विच पावे है,

(१) जो मनुष्य "मैं" को "मैं" में पाए अर्थात् "मैं" को शोध कर वास्तव "मैं" को निश्चय करे सो इसका अर्थ यह है कि "मैं" पद का वाच्य अर्थ देह, इन्द्रिय, प्राण, अन्तःकरण, नाम, वर्ण, आश्रम और अधिष्ठान कूटस्थ है और लक्ष्य अर्थ केवल अधिष्ठान कूटस्थ है। जब सर्व कल्पित और मिथ्या संघात का त्याग करके केवल अधिष्ठान कूटस्थ को "मैं" निश्चय करे सो वास्तव मैं है, और फिर "तू" पद को अधिष्ठान कूटस्थ में कल्पित जान कर लीन करे अर्थात् 'तू' को "मैं" में मिलाए अर्थात् अभेद रूप निश्चय करे और फिर "मैं" और "तू" की कल्पना को त्याग कर केवल कूटस्थ रूप आपको निश्चय करके स्थित हो वही प्रकाश का बूझने वाला है। अर्थात् स्वयं प्रकाश आत्म ब्रह्म का ज्ञाता है सो स्वयं प्रकाश ब्रह्म रूप है श्रुतिप्रमाण, —"ब्रह्म विद् ब्रह्मैव भवति" ब्रह्म का जानने वाला ब्रह्म रूप है।

तूँ मैं दे विच मिलावे है,
मैं तूँ छोड़े आप समावे है,
सो हेमाँ बूझन हारा है ॥६॥



आत्म दर्शन घाट ॥ १३ ॥

—:o:—

पौरी ॥१॥

मेरा मन लागा लालन संग ॥१॥ रहाउ ।

निशि-दिन लालन के रंग राता,
उतर गया भव रंग ॥२॥
प्रीत की रीत भली लालन की,
भूल न होवे भंग ॥३॥
दर्शन पाय मनुवा अलसाना,
बिसम गए सब अंग ॥४॥
बिसम बिसम ऐसा मगनाना,
बिसर गया तन संग ॥५॥
लालन संग लाल भयो हेमाँ,
ज्यों सागर मिल गंग ॥६॥

पौरी ॥२॥

माई री, मैं आतम दर्शन पाया ॥१॥ रहाउ ।

सहज आनन्द कुशल भया मेरे,
घर घर मंगल गाया ॥२॥
विषयानन्द न भावे मन को,
ब्रह्मानन्द समाया ॥३॥
वैर विरोध निवारे मन से,
ताप कलेश मिटाया ॥४॥
कर्म[1] अकर्म[2] विकर्म[3] न भासे,
गुण[4] मन प्राण न काया ॥५॥
नाम रूप की कलना भूली,
चैतन दृष्टि आया ॥६॥
देह अभिमान फुरे नहीं रंचक,
अपना आप गंवाया ॥७॥
ढूंढ मिटी तृष्णा सब चूकी,
ज्ञान भानु प्रगटाया ॥८॥
जित कित आतम दृष्टि आवे,
द्वितीया भाव भुलाया ॥९॥

(१) वेदोक्त कर्म (२) फल रहित कर्म (३) निषिद्ध कर्म अर्थात् वेद विरुद्ध कर्म (४) सत्व, राजस्, तमस ।

अचरज देखा अचरज सुनिया,
अचरज ही मन भाया ॥१०॥
नहीं कुछ खोया नहीं कुछ पाया,
संशय मूल चुकाया ॥११॥
कहे हेमाँ नित आपत आतम,
आतम हो पतियाया[1] ॥१२॥

पौरी ॥३॥

पाया आतम का दीदार ॥१॥ रहाउ ।

नाम रूप बिसरया जग सारा,
बिसर गया घर बार ॥२॥
अन्तर बाहर एको दीखे,
जो सहिरा[2] बाज़ार ॥३॥
ग्रहण न त्याग न स्तुति निन्दा,
नहीं दुश्मन नहीं यार ॥४॥
एको एक निरंजन पूर्ण,
नहीं पुरुष नहीं नार ॥५॥
ऊँच न नीच न निर्धन धनिया,
नहीं रैयत सरदार ॥६॥
एको वस्तु एक कर भासी,
नहीं दो तीन न चार ॥७॥

(१) प्रतीत हुआ (२) जंगल ।

तरुवर[1] बीज बीज है तरुवर,
त्यों आतम संसार ॥८॥
सागर नीर नीर है सागर,
त्यों जग आतम सार ॥९॥
अंडज[2] जेरज[3] स्वेतज[4] उद्‌भुज[5],
खूब खिड़ी गुलज़ार[6] ॥१०॥
पिंड ब्रह्मण्ड समान प्रकाशे,
नख शिख पूरण सार ॥११॥
जीवातम परमातम एको,
आतम रूप अपार ॥१२॥
हेमे[7] को हेमाँ नित देखें,
दर्पण दृष्टि निहार ॥१३॥

—:o:—

(१) वृक्ष (२) अंडों से उत्पन्न होने वाली सृष्टि (३) जेर से उत्पन्न होने वाली सृष्टि (४) पसीने अथवा मल से पैदा होने वाली सृष्टि (५) पृथ्वी को फाड़ कर उत्पन्न होने वाली सृष्टि (६) फुलवाड़ी।

(७) जैसे दर्पण में दृष्टि से देखकर हेमें को हेमाँ नित्य ही देखता है अर्थात् दृष्टा ही आपको देखता है अन्य को नहीं देखता वैसे ही ज्ञान रूप दर्पण में देखने से सर्व जगत् अपना आप दिखाई देता है। द्वैत न था, न भासता है। आत्मा ही आत्मा को देखता है।

पौरी ॥४॥

अब मैं पाया पावन योग ॥१॥ रहाउ ।

दुःख संताप गए सब मन से,
उतर गए सब रोग ॥२॥
चेतन तत्व निरन्तर पूर्ण,
नहीं संयोग वियोग ॥३॥
जो जो भासे ब्रह्म प्रकाशे,
खाणी[1] बाणी[2] लोक[3] ॥४॥
ढूंढ मिटी चिंता सब भूली,
बिसर गए सब रोग ॥५॥
करना था सो सब कुछ किया,
और न करने योग ॥६॥
नित संतुष्ट[4] तृप्ति रस भीनो,
बिसरे इन्द्रिय[5] भोग ॥७॥
नित प्राप्त आतम तत्व पायो,
भूल्यो देह संयोग ॥८॥

(१) चार खाणी हैं, अडंज, जेरज, स्वेतज, उद्भुज (२) चार बाणी हैं, परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी (३) लोक चौदह हैं, सात ऊपर और सात नीचे । भूः, भुवः, स्वः, महः, जना, तपः, सतः, यह ऊपर के हैं अतल, वितल, ततल, रसातल, तलातल, महातल, पाताल यह नीचे के हैं । (४) प्रसन्न (५) इन्द्रियों के रस ।

निर्भय होय विराजूँ हेमाँ

जीवन मुक्त अरोग ॥६॥

पौरी ॥५॥

घट घट में राम प्यारा है ॥१॥ रहाउ।

घट में गंगा[1] घट में यमुना,
घट में ठाकुर द्वारा है ॥२॥
घट में काशी, घट में मथुरा,
घट में हरि दरबारा है ॥३॥
घट में ब्रह्मा घट में विष्णु,
घट में शिव मतवारा है ॥४॥
घट में सूरज घट में चन्दा,
घट में दामन तारा है ॥५॥
घट में खण्ड ब्रह्मण्ड प्रकाशे,
घट में सकल पसारा है ॥६॥
घट में कर्मी कर्म कमावे,
घट में नाम उच्चारा है ॥७॥
घट में भक्त रिझावे हरि को,
घट में हरि दीदारा है ॥८॥

(१) तेरी वृत्ति ही गंगा आदिक विशेष नदी तथा मन्दिरों में इष्ट भावना धारण करती है। अतः यह सब तेरे अन्तर हैं।

घट में पंडित वेद बखाने,
बहु-विधि शास्त्र विचारा है ॥६॥
घट में योगी ध्यान लगावे,
अनहद धुन झनकारा है ॥१०॥
घट में सांखी सांख्य विचारे,
नित्य अनित्य नितारा है ॥११॥
घट में ज्ञानी आतम खोजे,
अपना आप विचारा है ॥१२॥
घट में सूरज ज्ञान प्रकाशे,
जिसका सब उजियारा है ॥१३॥
घट में न्याय करें नित साहिब,
घट में धर्म द्वारा है ॥१४॥
घट में गोविन्द[1] घट में केशव,
घट में सत्य करतारा है ॥१५॥
घट में ब्रह्म अखण्ड विराजें,
घट में एक ओंकारा है ॥१६॥
घट खोजे हरि मिलें निरन्तर,
वेद पुराण पुकारा है ॥१७॥
घट में ब्रह्म समायो ऐसे,

(१) विष्णु शिव परमात्मा सब तेरा अपना संकल्प और भावना है इसलिए तेरे अन्तर और तेरा स्वरूप है।

गोरस[1] दूध मंझारा[2] है ॥१८॥
सुख सागर[3] घट ही में पायो,
हेमाँ सद बलिहारा है ॥१९॥

पौरी ॥६॥

सब घट पूरण आतम राम ॥१॥ रहाउ ।

ज्ञानस्वरूप स्वतः परकाशी,
अक्रिय अचल अकाम ॥२॥
अति सूक्ष्म अति इन्द्रिय[4] केवल,
रहित अरंभ[5] परिणाम[6] ॥३॥
नित्य प्राप्त नित्य मुक्त सनातन,
अगम अरूप अनाम ॥४॥
सत्ता मात्र[7] एक अविनाशी,
नहीं पुरुष नहीं वाम[8] ॥५॥
घट[9] उपाधि से नाना भासे,
भिन भिन रूप अर नाम ॥६॥
त्याग उपाधि लख्यो सर्वातम,
अस्ति भांति प्रिय राम ॥७॥

---

(१) माखन (२) मध्य-बीच में (३) सुख सागर अर्थात् परमानन्द ब्रह्म (४) इन्द्रियों से अगोचर (५) आदि बढ़ना (६) अन्त, घटना (७) द्वैता-रूप (८) स्त्री (९) शरीर, देह, व्यक्ति ।

पूर्णदर्शी पूर्ण हेमाँ,
निर्भय पूरण काम[1] ॥८॥

पौरी ॥७॥

घर वाला[2] घर ही में पाया ॥१॥
कुशल भया मन तन तृप्ताया ॥ रहाउ ।

ढूंढ मिटी चिंता सब नासी,
गद्गद्[3] आनन्द मंगल गाया ॥२॥
समता मुदिता हृदय प्रकाशी,
ताप क्लेश, विषाद[4] मिटाया ॥३॥
नाम रूप का भेद भुलाना,
सत्-चित् आनन्द दृष्टि आया ॥४॥
चित्त अचित्त भया सहजे ही,
मन से मनन भाव बिसराया ॥५॥
तुरियातीत[5] अवस्था पाई,
बन्ध मोक्ष का खेद मिटाया ॥६॥
आतम माँहि बिराज्यो हेमाँ,
नहीं कुछ खोया नहीं कुछ पाया ॥७॥

(१) जिसकी कामना पूर्ण हो गई है (२) परमात्मा को आत्मा रूप निश्चय किया (३) प्रसन्नता (४) झगड़ा (५) तुरिया

पौरी ॥८॥

लुक लुक[1] झातियां पावे यार ॥१॥ रहाउ ।

लूँ लूँ दे विच प्रीतम वसदा,
तिल तिल यार निहार ॥२॥
पिप्पलियां[2] विच नाज़ अदाई,
नैना विच दीदार ॥३॥
दिल दे अन्दर सोच करेंदा,
लब्बाँ विच गुफ़्तार[3] ॥४॥
स्रोती सुणदा नाद पियारा,
समझे सार असार ॥५॥
प्राणां ते चढ़ सैर करेंदा,
प्राणां दा आधार ॥६॥
अन्तःकरण समग्री सारी,
सब नां दा सरदार ॥७॥
सिफ़तीं-बाहर[4] सिफ़तीं-राता[5],
पूरण पुरुष अपार ॥८॥

(१) छिप छिपकर झाँकता है अर्थात् निराकार चैतन्य आत्मा, परम विलासी, इन्द्रिय और अन्तःकरण द्वारा झांकियाँ दिखा रही है (२) बरौनी अर्थात् पिप्पलियाँ का झपकना मानो प्रीतम आत्म के संकेत हैं (३) होठों में बोलता अर्थात्-विलास करता है। (४) गुणातीत (५) सर्व गुण निधान ।

घट ही मांहि निरंजन व्यापक,
खोजो आप विचार ॥९॥
आपे गुरु आपे हैं सेवक,
आप करे उपकार ॥१०॥
अन्तर बाहिर एको रविया,
दूजा नांहि शुमार ॥११॥
नाना स्वांग धरे जग मांहिं,
चेतन रूप अपार ॥१२॥
आपे नारी आपे गभरू[1],
आप करे विच प्यार ॥१३॥
आपा खोज परमपद पावे,
आपा भूल विगार ॥१४॥
हेमराज घट घट परमातम,
पूरण पुरुष अपार ॥१५॥

—:o:—

(१) पति ।

पौरी ॥६॥ काफ़ी

सोहणे आन के झाती पाई है[1],
मेरे मन दी आस पुजाई है ॥१॥ रहाउ ।

झाती पाय के दिल विच वास कीतुस,
लूँ लूँ दे विच परकाश कीतुस,
दुःख दर्द विछोड़े दा नास कीतुस,
छाती लाय के तपत बुझाई है ॥२॥

मुख वेख के मैं पुरनूर होई,
सोहणे यार दे मन मंज़ूर होई,
हस्ति[2] इल्म[3] ते ऐन[4] सरूर[5] होई,
ममता देह दी मूल गंवाई है ॥३॥

दुई[6] दूर कीती कुल ख़ैर[7] होई,
ख़ुदी[8] नास कीती सारी मैल धोई,
गल लाय के यार नूँ नींद सोई,
सारी सुरत संभाल सुलाई है ॥४॥

---

(१) झाँकी दिखाई है अर्थात् बुद्धि कहती है कि मुझको परम प्रिय सत्-चित् आनन्द रूपी आत्मा की ज्ञान रूपी प्राप्ति हुई है (२) सत् (३) चित् (४) केवल (५) आनन्द (६) द्वैत (७) सर्व सुख, आनन्दकुशल (८) आपा-अहंकार ।

मिल यार नूँ मैं .खुद[1] यार होई,
दिलदार मिल्या दिलदार होई,
नित्य नूतन गुल[2] बेख़ार[3] होई,
हेमाँ शादी[4] अबद[5] मनाई है ॥५॥

पौरी ॥१०॥ काफ़ी

आओ सैयो मैनू देओ मुबारक,
राँझन[6] मैं घर आया[7] है ॥१॥ रहाउ।

खोज खोज[8] मैं घट विच पाया,
ढूँढ मिटी मन तन तृप्ताया,
अन होदा संताप मिटाया,
गद्गद् मंगल गाया है ॥२॥
मिलिया मुड़ के[9] विछड़े नाहीं,
चित आया मुड़[10] विसरे नाहीं,

(१) प्रीतम आत्मा का ज्ञान होने से मैंने आपको आत्म निश्चय किया (२) फूल (३) कांटे से रहित (४) आनन्द (५) सदा, नित्य (६) प्यारा (७) आत्मा का अपरोक्ष ज्ञान हुआ है।

(८) विवेक द्वारा आप को जब सत् चिदानन्द स्वरूप आत्मा निश्चय किया तब शान्ती और तृप्ति पाई, तथा सर्व दुःख भ्रम मात्र जानकर दूर हुये (९) सत चित आनन्द आत्मा का ऐसा निरावरण ज्ञान हुआ है (१०) वह न भिन्न होता है और ना भूलता है, किन्तु अपना स्वरूप हो गया है।

अन्दर बाहिर निखड़े नाहीं,
अद्भुत चोज दिखाया है ॥३॥
मैं तू दा जद घुँड उठाया,
मिलन बिछोड़ा सकल भुलाया,
निकट दूर दा भरम मिटाया,
जित कित दृष्टि आया है ॥४॥
ना कोई अन्दर ना कोई बाहर,
ना कोई बातिन, ना कोई ज़ाहिर,
ना कोई जाहिल[1], ना कोई माहिर[2],
आपे आप समाया है ॥५॥
जद इह रमज़[3] अनोखी[4] पाई,
विसर गई सब जग चतुराई,
सुध बुध राँझन विच्च समाई,
तन दा मान गंवाया है ॥६॥
खुश रंगी[5] चोला गल पाया,
ग़म[6] अन्दोह[7] तमाम मिटाया,
ग़ैरीयत[8] दा नाम गंवाया,
हैमाँ, जशन[9] मनाया है ॥७॥

(१) मूर्ख (२) बुद्धिमान (३) ज्ञान सिद्धांत, रहस्य-गुह्य (४) आश्चर्यरूप-निराली। (५) परमानन्द रूप (६) चिंता ! (७) शोक ! (८) भेद भाव (९) आनन्द।

पौरी ॥११॥ काफ़ी

मिलया अचरज यार यगाना[1] है,
जैंदा घटघट चंग[2] चंगाना है ॥१॥ रहाउ ।

नाम रूप दा घुँड उठायुम,
हस रस[3] यार गले सों लायुम,
प्रीतम होके प्रीतम पायुम,
नहीं अपना बेगाना है ॥२॥

अन्दर वड़ के[4] पायुम झाती,
सिफ़ती[5] छोड़ लधुम विच जाती,
रह्युम न खदशा[6] मौत[7] हयाती[8],
नहीं आना नहीं जाना है ॥३॥

हर मज़हब दा राह सूंआतुम,
हर मार्ग दा पंथ पछातुम,
घट घट वड़ के झाती पातुम,

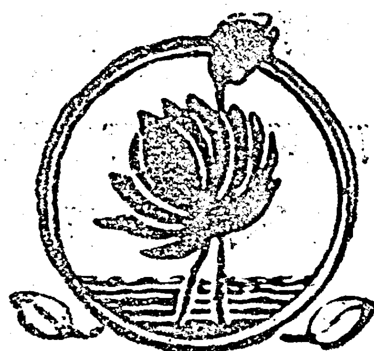
(१) अभेद, अपना (२) जिसका एक एक शरीर चंग और चंगाना अर्थात् सितार और तंबूरा हैं अर्थात् जो सब शरीरों में आतम रूप होकर पूर्ण है और सारे शरीर उसके ज्ञान का हेतु हैं। (३) आनन्द सहित (४) आप को आप खोजकर (५) माया और अविद्या के विशेषण को त्याग कर केवल चैतन्य मात्र ही आपको देखा (६) भय (७) मरण (८) जीवन।

ऐन[1] ग़ैन[2] दा फ़र्क[3] गंवाया,
खुलिया सब इसरार[4] ॥३॥
वाहदत[5] कसरत[6] विच समाई,
कसरत वाहदत होके भाई,
जुज़[7] विच कुल[8] दी सोझी[9] पाई,
बिसर गया संसार ॥४॥
कहिन सुनन ते न्यारा जोई,
ला मकान[10] कहे सब कोई,
है नाही[11] दा झगड़ा होई,
तिस दा गरम बजार[12] ॥५॥
साक़ी[13] ने भर जाम[14] पिलाया,

(१) अभेद (२) भेद (३) भाव (४) गोप अर्थ, भेद (५) एकता (६) अनेकता (७) भाग, अल्प (८) सर्व समूह (९) ज्ञान (१०) देश की अपेक्षा से रहित।

(११) कोई कहता है कि "हैं" कोई कहता है कि "नहीं है" यह परस्पर झगड़ा हो रहा है (१२) "तिसदा गर्म बाजार" अर्थात् उसका ही सर्व पसारा है अर्थात् यह वही सर्वरूप है (१३) साकी नाम कवि का है। यहां इसका अर्थ सत्गुरु से है क्योंकि सतगुरु ही जिज्ञासुओं के प्रति तत्व ज्ञानरूपी मद यथा अधिकार बाँटते हैं (१४) प्याला भरके पिलाया अर्थात् जिज्ञासुओं

बेखुद[1] होके जशन मनाया,
ग़ैरीयत[2] दा नाम गंवाया,
होई जय जयकार[3] ॥६॥



(१) देह अध्यास से रहित होकर आनन्द मनाया (२) भेद भावना का नाम भी भुला दिया (३) सर्व दुःख की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति रूप जय जयकार हुई और कुछ करना न रहा। कृतकृत्यता रूप विश्राम अवस्था प्राप्त हुई।

आतम स्थिति घाट ॥१४॥

—:o:—

पौरी ॥१॥

माई[1] री मैं हरि रस में मगनाना ॥१॥ रहाउ।

दौर[2] मिटी तृष्णा सब भूली,
आतम मांहि समाना ॥२॥

साधु समागम संशय चूक्यो,
प्रकट्यो आतम ज्ञाना ॥३॥

कंचन माटी सम कर जान्यो,
मेट्यो मान अपमाना ॥४॥

हर्ष शोक दोऊ मन से भागे,
भूल्यो रंक राजाना ॥५॥

जन्म मरण का संशय चूक्यो,
पायो पद निर्वाणा ॥६॥

शत्रु न मित्र न भाई बांधव,
नहीं अपना बेगाना ॥७॥

---

(१) हे सत्संग रूपी माता (२) चित्त की चंचलता।

ब्रह्मा चींटी गोविन्द देख्या,
भेद भाव बिसराना ॥८॥
बिन गोविन्द न दीखे दूसर,
ऊँच नीच सम जाना ॥९॥
भावाभाव न भासे कोऊ,
समता में मगनाना ॥१०॥
बिंब[1] प्रतिबिंब दोऊ इक हुए,
दर्पण द्वैत गिराना ॥११॥

(१) जैसे दर्पण को सन्मुख रखने से ग्रीवा पर स्थित जो मुख है वह बिंब कहा जाता है और दर्पण में स्थित मुख है वह प्रतिबिंब कहा जाता है और जब दर्पण हटा दिया जाए तो बिंब प्रतिबिंब में भेद नहीं रहता, वैसे ही द्वैत रूपी दर्पण के सन्मुख ईश्वर बिंब कहा जाता है और जीव प्रतिबिंब कहा जाता है। जब द्वैत-रूपी दर्पण मध्य से दूर हुआ अर्थात् टूट गया तब ईश्वर और जीव में भेद नहीं रहता, दोनों एक रूप हो जाते हैं। यथार्थ ज्ञान के होने से अज्ञान नाश हुआ। अज्ञान के नाश से भेद नाश हुआ। भेद के नाश होने से ईश्वर और जीव केवल चेतन रूप निश्चय हुए हैं और द्वैत रंचक भी प्रतीत नहीं होता।

नाम रूप[1] की कलना भूली,
अस्ति भांति प्रिय माना ॥१२॥

(१) सर्व पदार्थ पांच अंश से सिद्ध होते हैं। वह पांच अंश यह हैं। अस्ति, भांति, प्रिय, नाम, रूप। अस्ति अर्थात् है। भाँति अर्थात् भासता है। प्रिय अर्थात् प्यारा लगता है। नाम जो कल्प कर रखा जाय। रूप जो नाम के आसरे प्रतीत होता है। जैसे घट है। घट दो अक्षर नाम, गोल रूप है। अस्ति भासता है, भांति। जल भरने का कार्य देने से प्यारा लगता है, यह प्रिय है। अब इन पांच अंशों में से नाम रूप व्यभिचारी है अर्थात् बदलने वाला है, क्योंकि दूसरे पदार्थ पट में घट के नाम रूप का अभाव है भांति, प्रिय सत्य है इसी प्रकार घट में भी यह तीन अंश समान है। जो कुछ प्रतीत हो रहा है सब अस्ति, भांति और प्रिय सिद्ध हुआ है। नाम रूप की कल्पना हृदय से दूर करके केवल अस्ति, भांति, प्रिय को माना। निश्चय किया है अस्ति अर्थात् सत्य, भांति अर्थात् चित और प्रिय अर्थात् आनन्द। अतः केवल सत्-चित् आनन्द है।

शेष नाग रूप यही दो अंश व्यभिचारी होने के कारण कल्पित हैं और अस्ति भांति प्रिय समान होने से सत्य है। कल्पित वस्तु सदा मिथ्या होती है, इसलिए नाम रूप मिथ्या है। जब यह मिथ्या बिना अस्ति के नाम रूप बन्ध्या पुत्रवत् कहने मात्र असार है। इसलिए नाम रूप की कल्पना हृदय से दूर करके केवल अस्ति भांति को ही प्रिय निश्चय किया है अतः केवल एक ही सत् चित् आनन्द है। अर्थात् नाम रूप मिथ्या अंश सर्व पदार्थों से दूर किया तो शेष अस्ति भांति प्रिय ही रह जाता है इसलिए सिद्ध हुआ जो कुछ भासता है सब अस्ति भांति प्रिय है। नाम रूप अस्तिरूप अधिष्टान के आश्रित सिद्ध है।

शान्ति सरोवर डुबकी लीन्ही,
भूल्यो तन अभिमाना ॥१३॥
अचल होय जब हरि रस चाख्यो,
तब मन सुन्न समाना ॥१४॥
कहे हेमाँ इस विधि को हरि रस,
जिह चाख्यो मगनाना ॥१५॥

—:०:—

पौरी ॥२॥

बिसर गई सब जग चतुराई,
जब से आतम स्थिति पाई ॥१॥ रहाउ ।

अपना आप निरन्तर[1] देख्या,
निन्दा उस्तुति सकल भुलाई ॥२॥
वाद विवाद न भावे मन को,
हार जीत सकली बिसराई ॥३॥
वैर विरोध न भासे रंचक,
सकल संग हमरी बन आई ॥४॥
जन्म मरण का संशय चूका,
वस्तु वस्तु माँहि समाई ॥५॥

(१) अन्तराय से रहित ।

ताप कलेश निवारे सकले,
शान्ति सरोवर डुबकी लाई ॥६॥
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति भूली,
तुरिया नींद बुद्धि को आई ॥७॥
जो जो बनी भली कर मानी,
भूत भविष्यत् चिंत गंवाई ॥८॥
वृति थाकी व्यवहार न भावे,
होय अचिंत समाधि लगाई ॥९॥
मगन भयो हेमाँ निज माहीं,
अचरज ते अचरज गति पाई ॥१०॥

—:o:—

पौरी ॥३॥

माई री मैं आतम स्थिति पाई ॥१॥ रहाउ ।

मग्न भई ब्रह्मानन्द मांहि,
चिंता सकल भुलाई ॥२॥
जो अपना सो आहि बिगाना,
भेद दृष्टि बिसराई ॥३॥
लवण मिल्यो सागर के मांहि,
त्यों वृत्ति ब्रह्म समाई ॥४॥

नहीं वक्ता[1] नहीं श्रोता[2] कोई,
कांको बैठ सुनाई ॥५॥
तप्त मिटी मन तन की सगरी,
अन्तर[3] तीर्थ न्हाई ॥६॥
अब हेस्माँ समता रस भीनी,
बिसरी तात[4] पराई ॥७॥

—:o:—

पौरी ॥४॥

अब हम सोए पांव पसार[5] ॥१॥ रहाउ ।

मूंदी दृष्टि सहज सुख पाया,
बिसर गया संसार ॥२॥
बिसर गई सब जग चतुराई,
बिसर गया घरबार ॥३॥
ना कोई अपना दुश्मन भासे,
ना कोई अपना यार ॥४॥
हर्ष न शोक न उस्तुति निन्दा,
नहीं मिथ्या नहीं सार ॥५॥

(१) कहने वाला (२) सुनने वाला । (३) आत्मा (४) चर्चा, खबर (५) अब हम आत्मा में मग्न हुए जगत और देह भावना भूल गई है ।

पक्ष न वाद न खंडन मंडन,
नहीं अब जीत न हार ॥६॥
कौन करे अब सेवा वंदन,
कौन करे विचार ॥७॥
ऊँच न नीच न निर्धन धनिया,
नहीं भिक्षुक दातार ॥८॥
देह भावना सकल भुलाई,
रही न सुरत संभार ॥९॥
परम अगाध परम रस भीनो,
हेमाँ भुञ्चो सार ॥१०॥

—:o:—

पौरी ॥५॥ काफ़ी

हम आतम पद के वासी हैं,
सत्-चित् आनन्द अविनाशी हैं ॥१॥ रहाउ।

नहीं मात पिता ते जाए हैं,
नहीं कर्त्ता ते उपजाए हैं,
नहीं काहू ते हम आए हैं,
नित्य स्थित निज परकाशी हैं ॥२॥

महतत अहंकार न माया हैं,
गुण इन्द्रिय प्राण न काया हैं,
नहीं बिंब अज्ञान न छाया हैं,
हम निरमल सद् परकाशी हैं ॥३॥
सब इन्द्रिय अपना काज करें,
मन चित बुद्धि अपना ध्यान धरें,
तन उपज उपज कर फेर मरें,
हम अक्रिय सहज निवासी हैं ॥४॥
हम नूतन नित्य नवीने हैं,
हम आतम रस कर भीने हैं,
हम पूर्ण सद् तृपतीने हैं,
नित उद्यत परम विलासी हैं ॥५॥
नहीं ईश जीव का भेद कोई,
नहीं मैं तू का परिछेद कोई,
नहीं बंध मुक्त का खेद कोई,
हमाँ अनुभव मात्र सुभासी हैं ॥६॥

—:o:—

पौरी ॥६॥ काफी

सुनो अद्भुत[1] एक कहानी है,
जिस मनिया पद निर्वाणी है ॥१॥ रहाउ ।

पहले[2] रुच विच जगत उपाया,
आदम होके देखण आया,
फिर अपने विच आप समाया,
ज्यों पानी विच पानी है ॥२॥
दुई[3] दी धूर उडावों भाई,
ममता मूल मिटावो भाई,
परत के घर विच आवो भाई,

---

(१) सुनो, आश्चर्य रूप एक कथा है जिसको निश्चय करने से निर्वाण पद की सिद्धता होती है। (२) प्रथम माया वृत्ति को धार कर जगत को उत्पन्न किया और अविद्या वृत्ति को धार कर जीव रूप हो जगत को देखने आया। फिर माया और अविद्या की उपाधि को त्याग कर आप में आप समाया जैसे पानी में पानी समाया है।

(३) हे भाई, द्वैत की धूर उड़ावो अर्थात् द्वैत की कल्पना दूर करो और ममता अर्थात् "मैं मेरी" के भाव को मूल सहित मिटाओ ममता का मूल अविद्या अर्थात् देह अध्यास है इसके दूर करने से ममता का स्वतः ही अभाव हो जाता है। द्वैत, ममता और अविद्या का नाश करके अपने घर में पलट कर आओ अर्थात आपको आप विचार कर आप स्थित होवो क्योंकि एक जानी ही जानी अर्थात् अखंड सत् चित् आनन्द हैं !

इक जानी ही जानी है ॥३॥
अपने विच[1] मैं आप समाई,
गल लग मिलयुस जानी माही,
रह्यु स खबर ते सुध न काही,
की आखां मैं बानी है ॥४॥
ला मकानों[2] बाहर वसदा,
बे निशानों बाहर दिसदा,
गुम शुदगी विच गुम हो सुझदा,

(१) जब मैं आप में आप समाई अर्थात "मैं" का फुरना भी न रहा तब प्रीतम के साथ मिलकर यह अभेद रूप प्रतीत हुआ और फिर मुझे कोई खबर सुध ही न रही कि मैं और प्रीतम कौन हैं। फिर मैं वाणी द्वारा क्या कहूँ क्योंकि वाणी तो सापेक्षक पदार्थों को वर्णन करती है और निरपेक्ष वस्तु के लिए गूंगी है इसलिए वाणी की पहुँच से अगम्य है (२) "लामकानों बाहर वसदा" अर्थात जैसे मकान देश की कल्पना से रहित है वैसे "ला मकान व्यापक भाव की कल्पना से रहित है। जैसे निशान रंग और रूप की कल्पना से रहित है वैसे ही वेनिशान निहरंग, रूप और अरूप की कल्पना से रहित है। जैसे व्यापक और अरूपता का अभाव है वैसे ही इनके अभाव का भी अभाव है। "वाझों पते निशानी है" अर्थात लक्ष्य, लक्ष्यता, लक्षण का अभाव है, वस्तु मात्र में सर्व संज्ञायें आचार्य पुरुषों ने केवल उपदेश के निमित्त कल्पी हैं इसलिए पदों के अभाव का भी अभाव है।

बाझों पते निशानी है ॥५॥
हेमां[1] हिम थीं गल्ल सिधाना,
बाकी रह्य स न नाम निशाना,
अपने विच वह आप समाना,
ज्यों पानी विच पानी है ॥६॥



(१) "हेमा हिम थीं गल सिधाना" अर्थ यह है कि बर्फ की न्याई देह अध्यास करके जो हेमाँ भाव सत्य प्रतीत होता था वह गल कर अप्रतीत भाव को प्राप्त हुआ। न हेमाँ नाम रहा और हेमाँ का लक्षण देह अभ्यास रहा। आप में आप समा गया जैसे पानी में पानी समा जाता है।

सर्व ब्रह्म घाट ॥ १५ ॥

पौरी ॥१॥

वाह वाह, प्रगट्यो ब्रह्मज्ञाना ॥१॥ रहाउ ।

पूरण अद्वै सता प्रकाशी,
नहीं अपना बेगाना ॥२॥
सकल सृष्टि आतम कर भासी,
भेद भाव बिसराना ॥३॥
वर्ण आश्रम की कलना भूली,
अति[1] वर्ण आश्रम जाना ॥४॥
सब मत्तन को सार पछान्यो,
खोज्यो पद निर्वाणा ॥५॥
तारन ज्यों सब मत्त विलाये,
उदय भयो जब भाना ॥६॥
कल्पित जान तियागे सब मत,
अधिष्ठान[2] सत्य माना ॥७॥
बुद्धि रचित परपंच भुलायो,

---

(१) वर्ण आश्रम से अतीत (२) ब्रह्म, सत्य ज्ञान जिसमें सारे मत कल्पित हैं ।

सर्वातम दरसाना ॥८॥
वाद विवाद कपोल[1] कल्पना,
त्याग अखंड पछाना ॥९॥
सर्वज्ञता, अल्पज्ञता भूली,
भूल्यो एक और नाना ॥१०॥
अन्तर बाहर ब्रह्म विराजे,
पूरण एक समाना ॥११॥
पंच तत्व[2] पूरण परमातम,
हेमाँ निज मगनाना ॥१२॥

(१) कपोल कल्पना अर्थात् अक्षरी झगड़ा है क्योंकि केवल वैखरी रूप वाणी से सिद्ध होता है और हार जीत का हेतु होने से अद्वैत निष्ठा का विरोधी है और हर्ष शोक की सीमा है। अतः सर्व प्रकार से वाद विवाद त्यागने योग्य है।

(२) पंच तत्व पूर्ण परमात्मा हैं क्योंकि पंच का अर्थ परमात्मा है और जो पंच तत्व प्रतीत होते हैं यह पंच स्वभाव एक वस्तु के हैं वह वस्तु परमात्मा है 'पूर्ण स्वभाव परमात्मा का आकाश है। चेतन स्वभाव परमात्मा का पवन है। प्रकाश स्वभाव परमात्मा का अग्नि है। सर्वातम स्वभाव परमात्मा का जल है। आधार स्वभाव परमात्मा की धरती है, यह पांच नहीं परंतु एक वस्तु जो पूर्ण चैतन, स्वयं प्रकाश, सर्वातम और आधार रूप है वह अपने आप में स्थित हैं। वह वास्तव में सर्व कल्पना से रहित अपनी महिमा में स्थित है। जगत भी उसी को कहते हैं। यह ज्ञान यथार्थ है। इसी को ब्रह्म ज्ञान कहते हैं। ऐसे जानकर हेमाँ आप में आप मग्न हैं।

पौरी ॥२॥

साधो सब जग ब्रह्म स्वरूप ॥१॥ रहाउ ।

पूरण ब्रह्म अखंड विराजे,
अस्ति भांति प्रिय रूप ॥२॥
सर्वं[1] खल्विदं ब्रह्म पछान्यो,
त्यागो भ्रमतम कूप ॥३॥
एको ब्रह्म[2] नास्ति द्वितिया,
गावत वेद अनूप ॥४॥
वस्तु एक नाम द्वै कहिए,
ज्यों सागर जल रूप ॥५॥
तरुवर वृक्ष, वृक्ष है तरुवर,
त्यों जग राम स्वरूप ॥६॥
दृष्ट[3] अदृष्ट अगोचर गोचर,
चैतन रूप अरूप ॥७॥

---

(१) निश्चय करके यह सर्व ब्रह्म है।

(२) एक ब्रह्म है, दूसरा नहीं है (३) दृष्टि अर्थात् नेत्रों का विषय : अदृष्ट अर्थात् नेत्रों का अविषय : अगोचर अर्थात् इन्द्रियाँ जिसका विषय नहीं कर सकतीं : गोचर अर्थात् जिसे इन्द्रियाँ विषय कर सकती हैं रूप अर्थात् साकार। अरूप अर्थात्

नामरूप[1] शब्दारथ हेमाँ,
पूरण चिदघन रूप ॥८॥

—:o:—

पौरी ॥३॥

साधो सब जग ब्रह्म-विलास ॥१॥ रहाउ ।

ब्रह्मा चीटी पूरण चेतन,
जल थल धरति अकाश ॥२॥

एको ब्रह्म अखण्ड विराजे,
निर्मल निज परकाश ॥३॥

नहीं अन्तर नहीं बाहर कोई,
दूर नहीं कोई पास ॥४॥

परम तत्व स्थित निज मांहिं,
नहीं उपजे नहीं नाश ॥५॥

दूसर हुआ न है नहीं होगा,
हेमाँ स्वयं प्रकाश ॥६॥

(१) नाम रूप शब्द और अर्थ हेमाँ पूर्ण चिदघन है अर्थात सत्य और असत्य की कल्पना कोई नहीं। एक चैतन्य घन अपने आप में स्थित है।

पौरी ॥४॥ काफ़ी

सोहणे आन के रांद रचाई है,
सारी खल्क तमाशे नूँ आई है ॥१॥ रहाउ ।

तले धरत उते आकाश रच्युस,
चंद सूर्य दा परकाश रच्युस,
रस रूप शब्द ते बास[1] रच्युस,
विच पुतली देह नचाई है ॥२॥
सोह्णा बन तन जग विच आया है,
अपने हुस्न[2] दा नाज़[3] दिखाया है,
घट घट विच नाच नचाया है,
सैंया[4] रल मिल झुम्मर पाई है ॥३॥
सोह्णे यार ने भेस बटाया है,
नाना भांति दा रूप बनाया है,
लुक छिप्प तमाशे नूँ आया है,
अपनी खेल बहुत मन भाई है ॥४॥
आपे खेल ते आप खिलारी है,
आपे पुरुष ते आपे नारी है,

(१) गंध (२) सुन्दरता (३) प्रकाश (४) दस इन्द्रियाँ; चार अन्तःकरण इन चौदह सहेलियों ने अपने सुन्दर प्रीतम के चारों तरफ झुम्मर अर्थात् रास लीला रचाई है।

जोगी आप आपे घरबारी है,
वाह वाह अद्भुत बाज़ी पाई है ॥५॥

इथे ज़ाहिर बातिन जानी[1] है,
इथे हर इक शय[2] लासानी[3] है,
इह कुल जलवा[4] सुभहानी है,
हेमाँ द्वितीया दृष्ट भुलाई है ॥६॥



(१) सत् चित् आनन्द रूप परमात्मा (२) वस्तु, पदार्थ (३) अद्वैत, दूसरे से रहित (४) यह सब ही ब्रह्म का प्रकाश है।

हुल्लास्टक घाट ॥१६॥

—:०:—

पौरी ॥१॥

होरी खेलें आतम संग ॥१॥ रहाउ ।

भर पिचकारी सतगुरु डारी,
भीज गए सब अंग ॥२॥
उड़त गुलाल लाल भए सगरे,
चढ़ियो आतम रंग ॥३॥
स्वास स्वास पर सोहं हंसो,
बाजत ताल मृदंग ॥४॥
आतम वेत्ती[१] बुद्धि नायिका[२],
नाचत होय असंग[३] ॥५॥
सुन सुन मग्न भई सब इन्द्रिय,
भूली विषयन संग ॥६॥
ब्रह्मानन्द प्रकाश्यो हेमाँ,
होय न कबहूं भंग[४] ॥७॥

---

(१) आत्मा को जानने वाली (२) गोपी (३) देह की अहंता से रहित (४) नाश ।

पौरी ॥२॥ होरी

प्रभु ने शक्ति अपनी की अजब होरी
लगाई है ।
अखाड़ा जगत का रचकर अलौकिक[1] रास
पाई है ॥१॥ रहाउ ।

चढ़ाकर प्रेम का सूरज,
बनाया मस्त आलम[2] को,
सुबह से शाम तक जग में,
सकल सृष्टि नचाई है ॥२॥
उठाकर बहिर[3] से धूआँ,
चढ़ाया आस्माँ[4] ऊपर,
पवन से दूद[5] ने मिलकर,
घटा काली जमाई है ॥३॥
घटा काली में दामन[6],
जगमगा कर[7] नाच नाचे हैं,
दमामे की तरह बादल ने,
अद्भुत[8] धूम पाई है ॥४॥

(१) लोकातीत, अजीब, जिसके बराबर दूसरा कोई नहीं, (२) जगत (३) समुद्र (४) आकाश (५) धूआँ (६) बिजली (७) चमक कर (८) आश्चर्य ।

पिघल कर ताऊ से बादल,
पड़े धरती पै तारों[1] में,
चला कर मेघ पिचकारी,
तपत सगरी बुझाई है ॥५॥
उड़ाकर बाद से मिट्टी,
चढ़ाई आसमाँ ऊपर,
अंबीर अबरक गुलाल आसा[2],
सबों के सिर पे आई है ॥६॥
सुबह और शाम को कीड़े,
परिन्दे[3] गीत गाते हैं,
खुशी में आके सारों ने,
अजब शोभा बनाई है ॥७॥
छिपा कर भानु पश्चिम में,
किया तारीक[4] आलम को,
पिलाकर भांग[5] निद्रा की,
सकल सृष्टि सुलाई है ॥८॥
निकल कर चांद ने क्या,
फ़र्श[6] नूरी[7] का बिछाया है,

---

(१) तार तार होकर (२) समान, तरह (३) परों से उड़ने
[illegible] (४) अंधेरा (५) भंग, सूखी बूटी, जिसमें

सितारों की चमक ने,
आसमाँ की तह[1] छपाई है ॥९॥
उठाकर भेद का परदा,
निहारा[2] रास मण्डल को,
जिधर देखी उधर लीला,
प्रभु की जी को भाई है ॥१०॥
लगाकर ध्यान मन आनन्द से,
गद्गद् हुआ ऐसा,
जगत की भावना हेमाँ
हृदय से अब भुलाई है ॥११॥

पौरी ॥३॥ फाग

सन्त सभा मिल होरी गावें,
प्रेम-युक्त आनन्द मनावें ॥१॥ रहाउ ।

भर पिचकारी वचनन वारी,
रुचि रुचि आपस मांहि चलावें ॥२॥
निशि-दिन आतम रंग सों भीने,
ज्ञान गुलाल अंबीर उड़ावें ॥३॥
ओंकार सितार तंबूरा,
सोहं हंसो ताल बजावें ॥४॥

(१) तल (२) देखा !

भक्तिभाव का घुँघरू पहरें,
नृत्य करें गोविन्द रिझावें ॥५॥

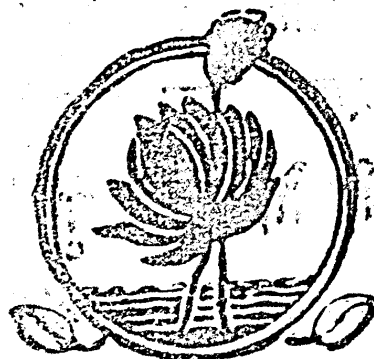
एको ब्रह्म नास्ति द्वितीया,
ऊँचे स्वर सों गाय सुनावें ॥६॥

नित्य निहारें एको आतम,
जग की ओर न दृष्टि लगावें ॥७॥

मंगल रूप रहें निशि-वासर,
गद्गद् जय जयकार बुलावें ॥८॥

नित्य रहें समता मदमाते,
निन्दा स्तुति सकल भुलावें ॥९॥

झूलें तुरिया के हिंडोले,
हंसा परमानन्द समावें ॥१०॥



आनन्द घाट ॥ १७ ॥

—:o:—

पौरी ॥१॥

आज मेरे घर लागो रंग ॥१॥ रहाउ ।

ज्ञान प्रकाश्यो, भ्रम भय नाश्यो,
संशय सकले भंग ॥२॥
मैं तूँ त्यागी, वासना भागी,
भूल्यो तन को संग ॥३॥
आतम पायो, मंगल गायो,
नाचत होय असंग ॥४॥
सोहं हंसों पूरण एको,
बाजत ताल मृदंग ॥५॥
स्थिति पाई चित्त गंवाई,
भीज गए सब अंग ॥६॥
पूरण चीन्यो, मन तृपतीन्यों,
हेमाँ करतत् भंग ॥७॥

—:o:—

पौरी ॥२॥

आज मेरे घर भया आनन्द ॥१॥ रहाउ ।

ज्ञान प्रकाश्यो, भ्रम भय नाश्यो,
प्रगट्यो परमानन्द ॥२॥
चिंत गंवायो सुख विधि पायो,
मन तन भया स्वच्छन्द[1] ॥३॥
मैं तूँ नासी, शान्ति प्रकाशी,
शोभत पूरणचन्द ॥४॥
द्वैत बिसार्यो, क्रोध निवार्यो,
भूल्यो उत्तम मंद[2] ॥५॥
करतत[3] भाव त्याग्यो हेमाँ,
गायो मंगल छन्द[4] ॥६॥



(१) सुखी, स्वतन्त्र (२) नीच (३) मैं करता हूँ, यह मुझको

चरित्र घाट ॥ १८ ॥

—:०:—

निर्देश वस्तु रूप मंगल ।

॥ दोहा ॥

ज्ञान स्वरूप अखण्ड अति,
अगम अपार अरूप ।
नाम रूप गुण से परे,
अस्ति भांति प्रिय रूप ॥१॥
सत्य स्वरूप प्रकाशमय,
केवल अनुभव सार ।
भेद अभेद विवेक से,
हेमाँ रहित विचार ॥२॥
अगम अपार अनन्त अज,
निर्विकार निष्काम ।
सत् चित आनन्द रूप सों,
अनुभव मात्र नमांस ॥३॥

॥ कुन्डली ॥

एक जहां कहना नहीं,
कहां दोय अरू तीन ।
मन चित बुद्धि के वेग से,
अगम अगोचर चीन ॥
अगम अगोचर चीन,
नहीं कुछ ज्ञान अज्ञाना ।
ईश जीव नहीं ब्रह्म,
नहीं परिच्छिन्न समाना ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
न सारासार विवेक ।
पूरण चिद्घन रूप,
स्वतः परकाशी एक ॥१॥

एक वस्तु पूरण सदा,
जामें भ्रांति न भेद ।
स्वतः प्रकाशी एक रस,
स्थित नित्य अभेद ॥
स्थित नित्य अभेद,

केवल अद्वै रूप,
यद्यपि नानावत् भासे ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
न ईश्वर जीव विवेक ।
नाम रूप गुण कर्म से,
रहित वस्तु है एक ॥२॥

आदि पुरुष को वन्दना,
जांका सकल अकार ।
शीश अकाश पताल पग,
दस दिश भुजा पसार ॥
दस दिश भुजा पसार,
रवि शशि नयन प्रकाशें ।
तारागण सम्मूह,
तिलोले सुन्दर भासें ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
अनायम अचल अनाद ।
एक अखण्ड अडोल पुरुष,
सो कहिए हैं आद ॥३॥

जांको कर्मी कर्म कहे,
वैशेषिक कहें काल ।

नैयायिक ताको कहैं,
कर्ता ईश अकाल ॥
कर्ता ईश अकाल,
जोगीश्वर ध्यान लगावें ।
सांख्यी ताको पुरुष,
असंग अकर्त्ता गावें ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
वेदान्त कहैं आतम तांको ।
सोई सत्य स्वरूप,
नाम संज्ञा नहीं जांको ॥४॥

—:o:—

॥ कवित्त ॥

जैसे जैसे जान्यो कहीं, तैसे तैसे मान्यो सही,
निश्चय अनुसार फल पाय के, समायो है ॥
जैसे नाना बाटन तें, एक ग्राम पाईयत,
तैसे नाना भावन तें, एक पद पायो है ॥
कोऊ कहे राम, कोई अल्लाह, कोऊ गाड कहे,
कोऊ कहे मिल्यो, कोऊ न्यारो कहि सुनायो है ॥
एक वस्तु पूर्ण जांमें, बढ़े नाहिं घटे कछु,
हेमराज एकरस आयो, नाहि जायो है ॥१॥

॥ कवित्त ॥

आप ही के देखने को, आप ही त्रिगुण भयो ।
सत् रज तम होय, जग को पसारयो है ॥
कोऊ ऊंच कोऊ नीच, कोऊ राव कोऊ रंक ।
कहुँ दास कहुँ ठाकुर, आप हो पधारयो है ॥
पुण्य पाप भाव कर कर्म का विभाग भयो ।
कर्म उपासन कहुं ज्ञान को विचारयो है ॥
तीन गुण आप भयो तीनों से विवेक ।
हेमराज आप मांहि आप मिल्यो नाहिं न्यारो है ॥२॥

मारुत, व्योम तेज जल धर अंड भयो ।
नर नारी होय कर खेल को रचायो है ॥
सूर्य चन्द्र तारागण दामन प्रकाश कर ।
मेघ होय गर्ज गर्ज, धूम को मचायो है ॥
वड़वा अग्नि होय, जल को संकोच कीनो ।
जठरा अग्नि होय अन्न को पचायो है ॥
कर्म विभाग कर हेमाँ नाना रूप होय ।
जीवरूप देह मांहि नाच को नचायो है ॥३॥

—:o:—

॥ कुन्डली ॥

मेरो रूप अगाध है,
जाको आदि न अन्त ।
नामरूप नहीं सम्भवे,
वचन अगोचर मन्त ॥
वचन अगोचर मन्त,
जीव ईश्वर क्या कहिए ।
जो कहिए सापेक्षक,
तिस का दूसर लहिए ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
न मुझमें रंच बखेरो ।
केवल अनुभव मात्र,
स्वतः सिद्धरूप है मेरो ॥१॥

—:o:—

॥ दोहा ॥

अज्ञानी जाने नहीं,
जिज्ञासी को आस ॥
ज्ञानी जाने आतमा,
तत्वदर्शी निर्वास ॥१॥

सत्गुरु लक्षण, महिमा और नमस्कार

॥ दोहा ॥

जो जाने है ब्रह्म को ।
सो है ब्रह्मस्वरूप ॥
ताकी वाणी वेद सम ।
काटे भ्रम तम कूप ॥१॥
वरणाश्रम के भेद बिन ।
ब्रह्मवित् सतगुरु मान ॥
भाषा अथवा संस्कृत ।
बोलें वेद पछान ॥२॥
ऐसे गुरु को वन्दना ।
बारम्बार प्रणाम ॥
जांके वाक्य विलास से ।
भासे आतम राम ॥३॥
ज्यों दर्पण के संग से ।
मुख का दर्शन होय ॥
त्यों सतगुरु के वाक्य से ।
आतम दर्शन जोय ॥४॥
गुरु पग वचन अमोल भज ।
अर्थ धूर धर माथ ॥

अनुभव अतुट भंडार लहि ।
हेमाँ होय सनाथ ॥५॥
गुरु रवि दर्पण शास्त्र है ।
लोचन बुद्धि पछान ॥
जब हेमाँ तीनों मिलें ।
प्रतिबिंबित होय ज्ञान ॥६॥

—:o.—

॥ कुन्डली ॥

नमो नमो गुरुदेव को,
पूरण पुरुष अनूप ।
जांके वाक्य विलास से,
पाइये शुद्ध स्वरूप ॥
पाइये शुद्ध स्वरूप,
मिटे तन मन की भ्रांति ।
निर्भय होवे चीत,
उपजे निश्चलता शान्ति ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
मान सब त्यागो मन को ।
तन मन धन वाणी अरप,
सतगुरु पग बन्दो नमो ॥७॥

—:o:—

॥ दोहा ॥

हेमराज संसार में, सतगुरु परम जहाज़ ।
पार लंघावे सर्व को, बिन मांगे कुछ बाज ॥

संत लक्षण महिमा और संग प्रताप ॥३॥

॥ दोहा ॥

शान्तिवान निर्मान चित्त,
तत्व वित पूरण काम ।
समदरशी निष्कपट मन,
हेमाँ ताहि नमाम ॥१॥
पर उपकारी मित्र जग,
दयावन्त विद्वाम ॥
दंभ रहित निर्मल हृदय,
तांका का संग प्रमान ॥२॥
जग में बादल ज्यों चले,
चींटी को न दुखाय ।
हेमराज सो महा पुरुष,
आन दुःख सह जाय ॥३॥

॥ कुन्डली ॥

ऐसे सन्त दुर्लभ हैं,
जांके दम्भ न मान ।
विचरें जग में व्योमवत्,
केवल शून्य विज्ञान ॥
केवल शून्य विज्ञान,
शान्ति समता रस माते ॥
निर्भय निश्चल मत्त,
सदा आतम रंग राते ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
न उपमा जिनकी कैसे ।
केवल केवली रूप,
सन्त जग में हैं ऐसे ॥४॥

॥ दोहा ॥

संत बड़े परमार्थी,
उत्तम जांका दान ।
तिमिर मिटावें हृदय का,
हेमाँ देकर ज्ञान ॥५॥
सत्संगत में पाईये,

निर्मल आतम बोध ।
हेमराज तज आन संग,
सत्संगत को शोध ॥६॥

—:०:—

जिज्ञासी लक्षण ॥४॥

॥ कुन्डली ॥

शम दम श्रद्धा नम्रता,
जत वैराग्य विचार ।
विषयन से विपरीत बुद्ध,
सो जिज्ञासी सार ॥
सो जिज्ञासी सार,
जगत रति सकल त्यागे ।
निर्मम निरअभिमान,
शरण सतगुरु की लागे ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
देह को जान अनातम ।
सिमरे आतम सार,
सेव कर श्रद्धा शम दम ॥१॥
जाँका चित्त निराश होय,
विषयन से अत्यन्त ।

सिमरे भगवत् नाम नित,
ढूँढे संगत सन्त ॥
ढूँढे संगत सन्त,
गृहस्थ से होय उदासी ।
जग मर्याद बिहार,
रीत को जाने हासी ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
नाम जिज्ञासी ताँका ।
तांसू कहिए ज्ञान,
चित्त है निर्मल जाँका ॥२॥

जिज्ञासा जांके नहीं,
ताहि न वाक्य सुनाय ।
कलरासी पृथ्वी विखे,
उत्तम बीज न पाय ॥
उत्तम बीज न पाय,
पात्र बिन ज्ञान न कहिए ।
स्वान त्वचा के बीच,
नीर गंगा नहीं पईये ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
विषय से होय निराशा ।

तांसों कहिए ज्ञान,
होवे जांको जिज्ञासा ॥३॥

—:०:—

सात्विकी कुटुम्ब ॥५॥

॥ दोहा ॥

शान्ति को माता जान ले,
संतोष पिता कर धार ।
बुद्धि बहिन बनाय कर,
भ्राता मान विचार ॥
सत्य वचन का पूत कर,
क्षमा रूप कर नार ।
इस कुटुम्ब को धार कर,
हेमाँ ब्रह्म चितार ॥२॥

सात्विकी भेष ॥६॥

॥ दोहा ॥

सिर पर टोपी दया की,
पगड़ी शान्ति स्वरूप ।
अंगा आतम ज्ञान का,
कुर्ता धर्म अनूप ॥१॥

कमर सुतक्का जत्त का,
धोती निर्मल रीत ।
पनिया ध्यान चढ़ाय के,
हेमाँ रोधो चीत ॥२॥

—:o:—

काया महात्म्य ॥७॥

॥ दोहा ॥

बिन परमातम हृदय में,
पर को मूल न लियाय ।
आयु रूपी भीत पै,
ना मिथ्या चित्र बनाय ॥१॥
हेमराज इस देह में,
ले परलोक संवार ।
फिर पछतावा ना मिटे,
जा चूक्यो इक बार ॥२॥
इस कारण विधि ने दियो,
देह कुठाली तोहि ।
खोट निकासो आपना,
हेमाँ निज को जोहि ॥३॥

—:o:—

॥ कुन्डली ॥

काया मन्दिर हरि को,
अमृत सर श्री राम ।
तुर्या रूप दरबार में,
निज स्वरूप को धाम ॥
निज स्वरूप को धाम,
ज्ञान मुक्ता कर छाजे ।
अद्वै अनुभव ग्रन्थ,
तार सो ऽहं की बाजे ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
त्याग कर ममता माया ।
अन्तरमुखता धार,
परस तू अपनी काया ॥४॥
काया में भरपूर जो,
चैतन एक समान ।
सोई पूरण जगत में,
रंच भेद नहीं मान ॥
रंच भेद नहीं मान,
उभय को एक पछानो ।
काया जगत असार,

सार चैतन को मानो ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
पूर्ण परिच्छिन्न भुलाया ।
केवल चैतन सार,
नहीं कोऊ जगत न काया ॥

—:o:—

संसार स्वरूप वर्णनम् ॥८॥

॥ दोहा ॥

संकल्प रूप संसार को,
लोचन खोल न देख ।
नेत्र मूँदना जगत से,
ऐनक जान विशेष ॥१॥
भ्रान्ति मात्र संसार में,
चित को मूल न बांध ।
जान बूझ के हेमराज,
सागर माँहि न फांद ॥२॥
दृष्टमान परपंच यह,
ज्यों नभ नील पछान ।
मारुस्थल के नीर ज्यों,
हेमाँ मिथ्या मान ॥३॥

॥ कुन्डली ॥

शब्द मात्र संसार है,
जांमें नाना भाव ।
शब्द बिना बोधातमा,
स्थित स्वतः स्वभाव ॥
स्थित स्वतः स्वभाव,
शब्द सब तामें कल्पित ।
तांहीं का परकाश पाय,
शब्दारथ ज्वल पित ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
वास्तव रूप अशब्द ।
मिथ्या कल्पित जान.
शुभाशुभ सगरे शब्द ॥

—:o:—

संसार रीति वर्णनम् ॥६॥

॥ कुन्डली ॥

चाली जग में भेड़ की,
सिंह चाल नहीं कोय ।
इक पीछे दूसर डुबे,
आगा बूझे न सोय ॥

आगा बूझे न सोय,
फांद सागर में मारें ।
नहीं माने उपदेश,
न अपना आप सभारें ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
चलो अब चाल निराली ।
सिंह चाल को धार,
छोड़ यह भेड़ा चाली ॥१॥

कर्मकाण्ड के शास्त्र में,
जो है ज्ञातावान ।
जो पूजे बुत देव को,
सोई है --परधान ॥
सोई है --परधान,
सभों के सिरे विराजे ।
सिर पर झूलें छत्र,
बजत हैं आगे बाजे ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
भूल कर अपना धर्म ।
भटकें भव के मांहि,

वेद वाक्य के अर्थ में,
जो धारें परतीत ।
सो गिनिये हैं भ्रष्ट नर,
भव सागर में मीत ॥
भव सागर में मीत,
लोक सब थूकें तिस पर ।
इट्टां वट्ठे मार,
मारें सब मुक्के तिस पर ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
जगत में ऐसा भेद ।
कल्पित को सांचा लखें,
मिथ्या जानें वेद ॥३॥
अपना देव भुलाय के,
पूजें अवरें देव ।
भ्रांति मात्र संसार में,
शांति न लहें कदेव ॥
शांति न लहें कदेव,
काल का दंड सहारें ।
नहीं त्यागें हठ धर्म,
न अपना आप विचारें ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,

आन का नाम न जपना ।
जो चाहो कल्याण,
भजो नित आतम अपना ॥४॥
विद्या पढ़ पंडित भयो,
तर्कवाद में ताक ।
हार जीत में बांवरो,
फिरे उडावत खाक,
शान्ति कबहूं नहीं धारे ।
न्याय तराजू बीच,
न अपना आप विचारे ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
सकल मह जान अविद्या ।
जामें शान्ति न आय,
भुलाओ ऐसी विद्या ॥५॥
सिर पर लिट्टां धार के,
अंगी लाय भभूत ।
कमर लंगोटी पहन के,
गल में बांधें सूत ॥
गल में बांधें सूत,
दरों दर फिरें दिवाने ।
नहीं कुछ आतम ज्ञान,

जगत में रहें निदानें ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
न होवें कबहूं स्थिर ।
मन मुखता को धार,
छार डालें अपने सिर ॥६॥
अज्ञानी संसार में,
नाना भेष बनाय ।
कबहूँ धारें जटा जूट,
कबहूँ घरड़ मुँडाय ॥
कबहूं घरड़ मुँडाय,
कबहूँ पञ्चाग्नि तापे ।
कबहूं तीरथ जाय,
जाप काहूँ को जापे ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
कबहूं नहीं बोले वाणी ।
हाथ न आवे रंच,
खोवे आयु अज्ञानी ॥७॥

॥ दोहा ॥

योगी देह अभिमान है,
भोगी गृहस्थ अभिमान ।

ज्ञानी मुक्ति अभिमान है,
तत्ववित निर अभिमान ॥

ज्ञान साधन और तत्वज्ञान उपदेश

॥ १० ॥

॥ कुन्डली ॥

मुक्ति साधन चतुर है,
सम संतोष विचार ।
चौथा सत्संगत गिनो,
तीनों का आधार ॥
तीनों का आधार,
जहाँ होवे मन उपसम ।
तृष्णा होवे शान्त,
मिटे अज्ञान महातम ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
साधे जो पूर्व उक्ति ।
सुख तृप्ति और ज्ञान,
पाय पावे सो मुक्ति ॥१॥
तीन भूमिका ज्ञान की,
हैं जाग्रत के मांहि ।
चौथी कों स्वप्ना कहें,

पंचम सुषुप्ति आहिं ॥
पंचम सुषुप्ति आहिं,
षष्ट तुरया ही जानी ।
सप्तम तुरियातीत,
जहां केवल निर्बानी ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
साधन की युक्ति चीन ।
शुभ इच्छा सुविचारणा,
तनु मानस यह तीन ॥२॥
सोई विद्या सार है,
जांते उपजे शांत ।
अनुभव आतम बोध लहि,
मन की जावे भ्रान्त ॥
मन की जावे भ्रान्त,
न व्यापे क्षोभ कदाचित् ।
सब में पूरण एक,
जान के पावे स्थित ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
पढ़े यह विद्या जोई ।
विचरे जीवन मुक्त,
लहे निश्चल पद सोई ॥३॥

॥ दोहा ॥

प्राप्त को त्यागो नहीं,
अप्राप्त धरो न आस ।
हेमराज संतोष धर,
विचरो होय निराश ॥४॥
पांचों कर तूं जीव है,
पांच त्यागे ब्रह्म ।
हेमराज तज पांच तूं,
नासे जीवत भ्रम ॥५॥

—:o:—

॥ चौपाई ॥

मूर्ख का संग कबहूं न करो,
साधु संग में मन अनुसरो ।
काम क्रोध अहंकार निवारो,
दंभ ईर्षा हिंसा टारो ॥६॥
सुत वनिता की ममता त्यागो,
निर्मम होय शान्ति अनुरागो ।
धन अभिलाषा सकल निवारो,
तृपत होय आतम विचारो ॥७॥

देह अभिमान छरद वत् त्यागो,
परमानन्द ब्रह्म में लागो।
देह अभिमान दुःख को मूल,
देह अभिमान शोक अरु शूल ॥८॥

अहं देह संसार पछानो,
अहं देह बन्धन दृढ़ मानो ॥
अहं देह कर जीव अनीश,
अहं देह त्यागे सो ईश ॥९॥

तांते देहोऽहं त्यागो,
सिंह सर्पवत् तांते भागो।
आतम तीर्थ डुबकी मारो,
तप्त हृदय की सकल निवारो ॥१०॥

तन कर शीतल, मन कर शान्त,
सदा रहो केवल निह भ्रान्त।
निन्दा स्तुति में सम रहो,
तृष्णा त्यागो धीरज गहो ॥११॥

आतम देव आपको मानो,
निर्विकार कूटस्थ पछानो।
पुण्य पाप का संशय मेटो,
अक्रिय अचल आपको भेंटो ॥१२॥

आतम ब्रह्म अभेद पछानो,
ब्रह्म आतम में भेद न मानो ।
दोनों सत चित आनन्द रूप,
तांते उभय अभेद स्वरूप ॥१३॥
एक द्वैत है कलना मांहि,
भेद अभेद भी कल्पित आंहि ।
सत्तामात्र एक अविनाशी,
भेद अभेद वाद सब हासी ॥१४॥
अहं त्वं से रहित विराजे,
वचन अगोचर अनुभव छाजे ।
सोई अनुभव रूप तुम्हारा,
तम प्रकाश से आहि न्यारा ॥१५॥
सोई अनुभव रूप प्रपंच,
अनुभव से इतर नहीं रंच ।
हेमराज यह तत्त्व विचार,
धारे तरे सागर संसार ॥१६॥

—:o:—

॥ कुन्डली ॥

मुख में भक्ति धार के,
नेत्रों में वैराग ।

हृद् में ज्ञान विचार के,
जग में वरत सभाग ।
जग में वरत सभाग,
सर्व से मीठा बोलो ।
नहीं बांधो कहूं दृष्टि,
सर्व को मिथ्या तोलो ।
कहे हेमाँ स्वाराज,
रहो भीने आतम सुख ।
बिचरो जग के बीच,
होय नित्य प्रति अन्तर्मुख ॥१७॥

मुक्ति तांको होत है, जांको होवत वंघ ।
आतम को वंधन नहीं, आतम है निर्बंध ॥
आतम है निर्बंध, आप में आप समाना ।
मन चित बुद्धिसे परे, आप कर होवत भाना ॥
कहे हेमाँ स्वाराज, भ्रांति बन्धन की युक्ति ।
जब टूटे यह ग्रन्थि, मिटे तब बन्धन मुक्ति ॥१८॥

॥ चौपाई ॥

चेतन चिदाकाश चिद्रूप,
छोभ रहित आनन्द स्वरूप ।
जीवरूप सब मांहि विराजे,
सत्य स्वरूप निर्मल छबि छाजे ॥१९॥

आतम ब्रह्म जीव इक मानो,
तीनों चिदाकाश सामानो ॥
नाम भेद से भेद प्रकाशे,
अर्थ विचारे भेद विनाशे ॥२०॥
तांते अर्थ मांहि चित लावो,
त्याग भेद निश्चल पद पावो ।
भेद कल्पना शब्द पर्यन्त,
शब्द त्यागे सब को अन्त ॥२१॥

—:o:—

॥ दोहा ॥

ऐसे पद को पाय के,
सन्त रहें नित्य स्वस्थ ।
अत्तरी वाद विवाद तज,
त्तोभ रहित कूटस्थ ॥२२॥

—:o:—

॥ कुन्डली ॥

अन्तर बाहिर आतमा,
भेद भाव नहीं कोय ।
पूरण आतम देखिया,
संशय गए बिलोय ॥

संशय गए विलोय,
द्वैत को मूल उठाना ।
अचल अडोल अखण्ड,
ज्ञान का प्रगट्यो भाना ।।
कहे हेमाँ स्वाराज,
आप में आप निरन्तर ।
पूरण आतम ब्रह्म,
भेद बिन बाहिर अन्तर ।।२३।।

—:o:—

।। दोहा ।।

जे जाने तां आप है,
नहीं जाने तां आप ।
अनजाने ते होत है,
मध्यकाल संताप ।।२४।।

जो॰ जाने सो मुक्त है,
नहीं जाने सो बन्ध ।
भ्रांति मात्र संसार में,
भटके ज्यों खग अन्ध ।।२५।।

—:o:—

जीवन-मुक्त ज्ञानी लक्षण ॥११॥

॥ दोहा ॥

मनोनास क्षय वासना,
तत्व ज्ञान जिहँ होय ।
हेमराज सुन रे मना,
जीवनमुक्त है सोय ॥१॥
विषय त्याग क्षय वासना,
हर्ष शोक सामान ।
तृप्त होय चित जासका,
ज्ञानी ताहि पछान ॥२॥
आतम प्राप्ति होय जब,
विषय चाह होय शान्त ।
हेमराज मिसरी चखी,
खल चाहे केहिं भांत ॥३॥

—:०:—

॥ कुन्डली ॥

जांके चित्त में है नहीं,
ग्रहण त्याग की भ्रांत ।
आतम सुख उपजे तहां,

राग द्वेष होय शांत ॥
राग द्वेष होय शांत,
देह को मान भुलावे ।
शोक मोह से रहित,
अचिन्त्य समाधि लगावे ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
दुःख सब नासें तांके ।
पावे निश्चल भवन,
मान अपमान न जांके ॥४॥

—:o:—

॥ कुन्डली ॥

ऐसे ज्ञानी जगत में,
दुर्लभ देखे जाहिं ।
जांके दंभ न ईर्षा,
मान बड़ाई नाहिं ॥
मान बड़ाई नाहिं,
सर्व को समकर देखें ।
विद्या पढ़ सुनि समझ,
आपको अधिक न पेखें ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,

रहें जैसे के तैसे ।
धरें न रंच गुमान,
दुर्लभ हैं ज्ञानी ऐसे ॥५॥

—:o:—

॥ कुन्डली ॥

ममता मोह जांके नहीं,
ज्ञानी सोई मान ।
यद्यपि वरते जगत में,
तो हुँ मुक्त पछान ॥
तो हूं मुक्त पछान,
ईर्षा दंभ निवारे ।
सब को पूरण एक,
अद्वैती ब्रह्म विचारे ॥
कहें हेमाँ स्वाराज,
चित्त में धारे समता ।
विचरे जीवन मुक्त,
त्याग कर अहंता ममता ॥६॥
सो गृही त्यागी गिनो,
जासें राग न दोख ।
निर्मम निर अभिमान मन,
निर्मल जीवन मोख ॥

निर्मल जीवन मोख,
न राखे बहुत पसारो ।
शुद्ध व्यवहार चलाय,
करे छादन आहारो ॥
कहें हेमाँ स्वाराज,
विचारे ब्रह्मातम जो ।
यद्यपि दीसे गृहस्थ,
परन्तु त्यागी है सो ॥७॥
बीती को चितवे नहीं,
आगे करे न शोक ।
वर्तमान में वर्त ले,
सो गिनिये निर्दोष ॥
सो गिनिये निर्दोष,
दोष तहां कोऊ न आवे ।
इक रस रहे सदैव,
द्वैत को मूलो खावे ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
ज्ञान की उत्तम रीति ।
भावी को नहीं शोक,
चित्त नहीं चितवे बीती ॥८॥

—:o:—

॥ दोहा ॥

हेमराज इस जगत में,
शांतिवान सो मान ।
वाद न काहूं सों करे,
का काहूं की हान ॥६॥

—:o:—

संन्यासी लक्षण ॥१२॥

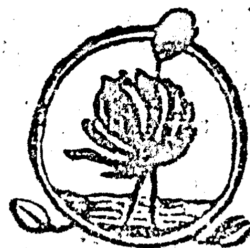
॥ कुन्डली ॥

आशा शून्य कर्तृत्व भंग,
शीतल चित निर्मान ।
समदर्शी नहीं कपट मन,
सो सन्यासी जान ॥
सो सन्यासी जान,
न मन काहूं संग लावे ।
नहीं बांधे अस्थान,
पवन ज्यों काल निभावे ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
सोई संन्यासी खासा ।
निज आतम संतुष्ट,
धरे नहीं लौकिक आशा ॥१॥

अवधूत लक्षण ॥१३॥

॥ कुन्डली ॥

विद्या सघरी शोध के,
निश्चय कियो स्वरूप ।
मान ईर्षा दम्भ तज,
पायो निश्चल रूप ॥
पायो निश्चल रूप,
आप में आप समाना ।
गृहण त्याग से रहित,
रहे आतम तृप्ताना ॥
कहे हेमाँ स्वाराज,
सुने नहीं देवे शिक्षा ।
सो अवधूत अनूप,
तजे सब लौकिक विद्या ॥१॥



कुदरत घाट ॥ १६ ॥

—:०:—

पौरी ॥१॥

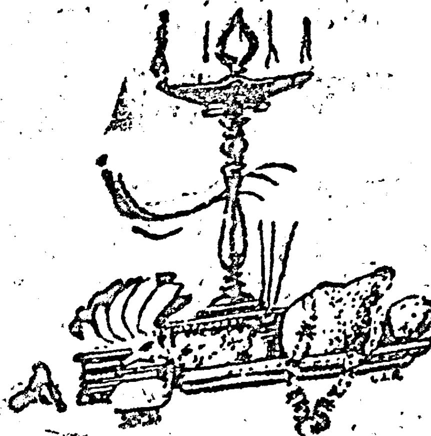
कुद्रत धरत, कुद्रत आकाश,
कुद्रत चन्द्र सूरज प्रकाश ॥१॥
कुद्रत है पनव कुद्रत है अग्ना,
कुद्रत मेघ, कुद्रत जल झरना ॥२॥
कुद्रत बीज कुद्रत है तरुवर,
कुद्रत बूँद कुद्रत है सरवर ॥३॥
कुद्रत पुरुष कुद्रत है नारी,
कुद्रत पुत्र कुद्रत महतारी ॥४॥
कुद्रत पर्वत कुद्रत है राई,
कुद्रत कोट कुद्रत है खाई ॥५॥
कुद्रत बाग़ बगीचे फूल,
कुद्रत सूक्ष्म कुद्रत थूल ॥६॥
कुद्रत रत्न जवाहिर लाल,
कुद्रत सोना रूपा माल ॥७॥

कुदरत बाल कुदरत है तरूणा,
कुदरत वृद्ध कुदरत है मरना ॥८॥
कुदरत शीश मज्जा है कुदरत,
कुदरत टांग भुजा है कुदरत ॥६॥
कुदरत पाद कुदरत है नैन,
कुदरत कान कुदरत है बैन ॥१०॥
कुदरत पाणि कुदरत है त्वचा,
कुदरत नाक कुदरत है गुदा ॥११॥
कुदरत उदर जठरा है कुदरत,
कुदरत जिगर गुरदा है कुदरत ॥१२॥
कुदरत जीभ कुदरत है लिंग,
कुदरत हीज कुदरत है पिंग ॥१३॥
कुदरत बुद्धि कुदरत अहंकार,
कुदरत चीत कुदरत विचार ॥१४॥
कुदरत प्राण अपान समान,
कुदरत ब्यान उदान पछान ॥१५॥
कुदरत दीखे कुदरत सुनिये,
कुदरत लखिये कुदरत गुनिये ॥१६॥
कुदरत चितवे कुदरत बोले,
कुदरत समझे कुदरत खोले ॥१७॥
कुदरत उठे कुदरत बहि जावे,

कुदरत दौड़े कुदरत रहि जावे ॥१८॥
कुदरत खेले कुदरत बिगसे,
कुदरत रोवे कुदरत ही हरसे ॥१६॥
कुदरत जीवे कुदरत बिसमाए,
कुदरत उपजे कुदरत बिनसाए ॥२०॥
कुदरत में कुदरत का खेल,
कुदरत बिछड़े कुदरत मेल ॥२१॥
कुदरत अन्दर कुदरत बाहर,
कुदरत बातिन कुदरत ज़ाहिर ॥२२॥
कुदरत त्रैगुण पसरी आपे,
कुदरत थाप्यो कुदरत थापे ॥२३॥
कुदरत नाचे कुदरत देखे,
कुदरत को कुदरत ही पेखे ॥२४॥
कुदरत अगम निगम है कुदरत,
कुदरत मूढ़ उत्तम है कुदरत ॥२५॥
कुदरत काम क्रोध अहंकार,
कुदरत जत वैराग्य विचार ॥२६॥
कुदरत सिद्ध साधक ऋषी-मुनि,
कुदरत पीर पैगम्बर गुणी ॥२७॥
कुदरत सुर नर राक्षस प्रेत,
कुदरत भूत पिशाच अचेत ॥२८॥

कुदरत मच्छ-कच्छ संसार,
कुदरत शारदूल बघियार ॥२९॥
कुदरत अंडज कुदरत जेरज,
कुदरत उद्भुज कुदरत स्वेतज ॥३०॥
कुदरत ऊँच नीच व्यवहार,
कुदरत शुभ अशुभ आचार ॥३१॥
कुदरत लच्च कुदरत अलच्च,
कुदरत पच्च कुदरत निरपच्च ॥३२॥
कुदरत गुरु कुदरत है चेला,
कुदरत सुरत शब्द का मेला ॥३३॥
कुदरत का है सकल पसारा,
कुदरत धरयो सकल अकारा ॥३४॥
कुदरत का एक खेल रचाया,
कादिर कुदरत रूप बनाया ॥३५॥
कुदरत में सब दृष्टि आवे,
कुदरत कादिर मांहि समावे ॥३६॥
कादिर से कुदरत नहीं भिन्न,
कादिर कुदरत जान अभिन्न ॥३७॥
वस्तु एक नाम द्वै जान,
कादिर कुदरत एको मान ॥३८॥
जो इस कुदरत का जाने भेद,

सोई कर्ता पूरण देव ॥३९॥
कुदरत आप कादिर भी ओहि,
दोऊ भाव से न्यारा सोई ॥४०॥
कादिर कुदरत भए अभेद,
सहजे दूर भयो जग खेद ॥४१॥
एको वस्तु एक कर भासी,
अचल अभेद रूप अविनाशी ॥४२॥
एक शब्द भी कहन कहानी,
केवल निर्गुण पद निर्वाणी ॥४३॥
वचन अगोचर दृष्टि आया,
हेमराज निज मांहि समाया ॥४४॥



मुक्ति घाट ॥ २० ॥

—:o:—

ओंकार अजूनी स्वयंभो,
सत्य-स्वरूप अजन्मा निरभो ।
अकाल अनाम अखण्डत देव,
सर्वकाल में जांकी सेव ॥१॥

ओंकार एक निराकारा,
ओंकार का सकल पसारा ।
ॐ ब्रह्मा विष्णु और रुद्र,
ॐ धरती आकाश समुद्र ॥२॥

ॐ नाम, नामी भी आप,
बिना नाम नामी नहीं थाप ।
नाम नामी में भेद न कोय,
जोऊ नाम नामी है सोय ॥३॥

ॐ नाम विचारे जोई,
सोऽहं अहंऽ सो प्रगट होई ।
ॐ में सोऽहं जब सूझ्यो,
ईश जीव में भेद न बूझ्यो ॥४॥

ॐ आप सोऽहं है सेव,
सोऽहं बूझे आपे देव ।
सोऽहं जाप स्वतः ही होय,
श्वास श्वास में प्रगटे सोय ॥५॥

जब ही श्वास अर्ध को आवे,
सो शब्द निज मांहि समावे ।
जब ही उर्ध्व को जावे श्वास,
ऽहं शब्द का होय हुलास ॥६॥

तांते जाप अजप्पा सोय,
बिना जपे निर्यत्न ही होय ।
सोऽहं अर्थ बताऊँ मीत,
शुद्ध बुद्धि कर धारो चीत ॥७॥

सो शब्द ईश्वर को कहिए,
ऽहं शब्द जीव को लहिये ।
सोऽहं आप पछानो भाई,
ईश जीव में भेद न राई ॥८॥

ईश जीव जब भए अभेद,
सहजे दूर भयो जग खेद ।
जीव ईश में भेद जो होय,
सर्वज्ञता अल्पज्ञता सोय ॥९॥

लीन भए जब दोऊ भाव,
प्रगट्यो सहजे स्वतः स्वभाव ।
चैतन ब्रह्मस्वरूप अपार,
चिह्नमात्र केवल निरधार ॥१०॥

तत्वमसि अभेद पछान्यो,
अहं ब्रह्म निज रूप बखान्यो ।
तीनों रूप आपको देखा,
पूर्ण पुरुष आपको पेखा ॥११॥

भावाभाव न एक न दोऊ,
शिव स्वरूप परमातम सोऊ ।
है नांहि का भेद मिटाना,
निर्विकल्प निज मांहि समाना ॥१२॥

समता भाव नाहि मुझ मांहि,
दूसर होय तो सोभी पांहि ।
एक अक्षर कहना जहां नांहि,
समता किसते कहिए तांहि ॥१३॥

समता में दोऊ पद आवें,
बिना द्वैत समता नहीं पावें ।
आतम अद्वै अगम अपार,
जीव ईश नहीं ब्रह्म विचार ॥१४॥

शून्य विज्ञान चिद्‌वन्न स्वरूप,
केवल केवली भाव अरूप ।
स्वयं रूप स्थित स्व मांहि,
शब्द अर्थ का भेद न तांहि ॥१५॥

नहीं कुछ आवे नहीं कुछ जावे,
आपन मांहि निज आप समावे ।
द्वंद्व भाव का नांहि ठिकाना,
स्वतः स्वभाव में निज मगनाना ॥१६॥

ॐ सोऽहं भेद न कोऊ,
एक अनेक सर्व है सोऊ ।
सर्व नाम आपे वरतारा,
सर्व रूप आपे आकारा ॥१७॥

बिना नाम भी तांको कहिये,
बिना रूप भी तांको लहिये ।
जगत रूप गोविन्द पछानो,
जग गोविन्द में भेद न मानो ॥१८॥

वस्तु एक नाम है दोऊ,
जोऊ वृक्ष तरुवर है सोऊ ।
सगुण आप निर्गुण भी ओही,
दोऊ भेद से न्यारा सोई ॥१९॥

सर्गुण निर्गुण भेद न मान,
घन स्वरूप केवल विज्ञान ।
सत्त चित्त आनन्द स्वरूप,
अस्ती भांति प्रिय शिवरूप ॥२०॥

साधन साधक सिद्ध न कोय,
प्रापत रूप स्वतः सिद्ध सोय ।
आतम में परमातम जाना,
हेमराज निज मांहि समाना ॥२१॥

॥ इति श्री शान्ति सरोवर समाप्तम् ॥



सतगुरु कृपा घाट ॥२१॥

—:o:—

पौरी ॥१॥

नमो गुरुदेव अविनाशी ॥१॥ रहाउ ।

निरंजन पुरुष परमातम,
नमो सुखरूप सुख राशी ॥२॥
नमो अविगत अखण्ड आतम,
नमो ईश्वर सर्व वासी ॥३॥
स्वयं ज्योति स्वयं स्थित,
नमो साक्षी स्व परकाशी ॥४॥
नमो ठाकुर परम प्यारा,
सर्वगुण मूल दुःखनाशी ॥५॥
अनामय निर्विकार अद्वै,
अलख चिद्रूप अविनाशी ॥६॥
नमो हे राम के प्यारे,
नमो हे माँ चिदाकाशी ॥७॥

—:o:—

पौरी ॥२॥

मेरे मना, सतगुरु माना माना ॥१॥ रहाउ ।

जांकी कृपा से भ्रम सब छीजे,
प्रगट्यो आतम ज्ञाना ॥२॥
देह अभिमान फुरे नहीं रंचक,
आतम में मगनाना ॥३॥
आसा मनसा सकल विनाशी,
पायो पद निरबाना ॥४॥
अहंता धूर मिटाई सगरी,
पूरण चन्द्र दिखाना ॥५॥
इक दृष्टि भर सतगुरु देख्या,
राम में राम समाना ॥६॥

—:o:—

॥ दोहा ॥

सतगुरु परम जहाज़ है,
भव सागर के मांहि ।
राम किनारा पार का,
तिन की कृपा पांहि ॥

—:o:—

गौरी ॥३॥

सतगुरु सानूं लाल लभाया,
ले तांको मैं शीश लगाया ॥१॥ रहाउ ।

लाल पाय तृष्णा सब नाशी,
इन्द्र भुपाला दृष्टि न आया ॥२॥
जांकी महिमा ऋषि मुनि गावें,
पंडित भूपति हाथ न आया ॥३॥
योगी जती सन्यासी ढूढ़ें,
सो धन गुरू प्रत्यक्ष दिखाया ॥४॥
तन मन सब इन्द्रिय अरु प्राणा,
उदित होय अभयपद पाया ॥५॥
खोया धन कोटिन जन्मन का,
एक दृष्टि कर राम लखाया ॥६॥

—:o:—

॥ दोहा ॥

महिमा अपरम्पार है,
सतगुरु हुँ की राम ।
दुःखभंजक दाते सुखं,
बारम्बार नमाम ॥

—:o:—

पौरी ॥४॥

सतगुरु सानूं हरि दिखलायो,
दर्शन पाय मैं हरि हो आयो ॥१॥ रहाउ ।

सतगुरु वचन प्यारा लागा,
सुन तांको मैं चीत बसायो ॥२॥
मन मन्दिर में हरि विराजें,
दीपक ज्ञान जलाय दिखायो ॥३॥
गगन मांहि बादल के छाये,
चंदा था पर दृष्टि न आयो ॥४॥
देहोऽहं बादल के नासे,
सतगुरु आतम रूप लखायो ॥५॥
भेद भावना मिट गई सारी,
हरि मिल हरि हो आप समायो ॥६॥
राम कृपा सतगुरु की होई,
कोटि जन्म का तिमिर मिटायो ॥७॥

॥ दोहा ॥

हरि सिमरत बहु सुख भया,
मिटे सकल संताप ।
शान्ति सरोवर डुबकी लीनी,
दूर भए सब ताप ॥

पौरी ॥५॥

(जी) चित चरण कमल पै धरिये ॥१॥ रहाउ ।

नौ निधि सब सिद्धि गुरु चरनन में,
पकड़ सकल दुःख हरिये ॥२॥
शान्ति मुक्त नित चरनन सेवें,
रुचि रुचि चरनन फड़िए ॥३॥
आन उपाय नहीं तरने को,
गुरु पग नौका करिये ॥४॥
राम रखो चित गुरु चरनन पै,
प्रेम हिये में भरिये ॥५॥

—:o.—

पौरी ॥६॥

आओ चलें सतगुरु दरबारा,
पावें आतम रस निरधारा ॥१॥ रहाउ ।

ताप मिटावें सुख हूं पावें,
सतगुरु जग में परम उदारा ॥२॥
शांति भारे मुदिता छिड़के,
निरभय सतगुरु का दरबारा ॥३॥
जत वैराग्य विवेक संतोषा,
ठाड़े रहें नित्य बाहर वारा ॥४॥

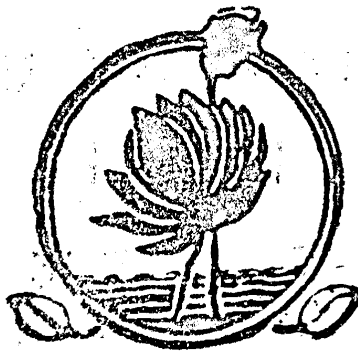
ज्ञान-प्रदीप अति छवि छाजे,
दूर करें महा घोर अंधारा ।।५।।
तुर्या आसन सहज सिंहासन,
तांपर बैठ्यो पुरुष अपारा ।।६।।
श्रुति स्मृति की लोली गावें,
नृत्य करें छन छन छनकारा ।।७।।
अनहद बाजा बाजे सद ही,
ॐ ओ३म ओंकारा ।।८।।
आप मिटावें सतगुरु पावें,
राम का अति ही हेमाँ प्यारा ।।९।।

—:o:—

।। दोहा ।।

सतगुरु कृपा दृष्टि से,
पूरण होवें काज ।
राम शरण सतगुरु गह्यो,
सब संतन सिरताज ।
हरि दर्शन की आरसी,
सतगुरु हैं की देह ।
लख्या चाहें अलक्ष्य को,
इन ही में लख लेह ।

सतगुरु स्वामी हेमराज,
पूरण पुरुष अपार ।
राम सदा कीर्ति करे,
सतगुरु के दरबार ॥



मलिक दौलत राय चिदाकाशी ने यह आरती घाट भेंट किया।
(दास व दासी का पद भोग के स्थान रक्खा है)

सतगुरु आरती घाट ॥२२॥

—:o:—

आरती ॥१॥

महाराज श्री हेमराज जी
सतगुरु ईश्वर ओ३म् नमः
परम मनोहर ज्ञान प्रभाकर
आप हरिहर ओंम् नमः ॥
। रहाउ ।

सत स्वरूपा आनन्द रूपा,
महा अनूपा ओंम् नमः ॥
सुख शान्ति दातार स्वामी,
अनुभव सागर ओंम् नमः ॥१॥

परम अवतारा परम उपकारा,
तिमिर निवारा ओंम् नमः ॥
दीन दयाला सर्व दुःख भंजन,
भ्रम भय पर हर ओंम् नमः ॥२॥

हे रखवारे हे प्रतिपारे,
परम प्यारे ओंम् नमः ॥
नित ही सेवें चरन तिहारे,
(रहें सदा ही दास तिहारे)
यही कृपा कर ओंम् नमः ॥३॥

—:०:—

आरती ॥२॥

महाराज श्री हेमराज,
ओंम् नमः ओंम् ओंम् नमः ॥
सतगुरु प्यारा परम अवतारा,
ओंम् नमः ओंम् ओंम् नमः ॥
। रहाउ ।

शुद्ध रूपा चिद स्वरूपा,
ओंम् नमः ओंम् ओंम् नमः ॥
ज्ञान प्रभाकर दया सागर,
ओंम् नमः ओंम् ओंम् नमः ॥१॥
अन्तरयामी पूर्णकामी,
ओंम् नमः ओंम ओंम् नमः ॥
मंगल दर्शन, अमृत भाषण,
ओंम् नमः ओंम् ओंम् नमः ॥२॥

शान्ति दाता, प्रेम विधाता ।
ओम् नमः ओम् ओम् नमः ॥
भ्रम छेदक, ब्रह्म वेदक ।
ओम् नमः ओम् ओम् नमः ॥३॥
पाप हरता, धर्म धरता ।
ओम् नमः ओम् ओम् नमः ॥
पालूँ आज्ञा, राखूँ श्रद्धा ।
ओम् नमः ओम् ओम् नमः ॥४॥
क्रोध जारो, मान मारो ।
ओम् नमः ओम् ओम् नमः ॥
विषय टारो, मन सुधारो ।
ओम् नमः ओम् ओम् नमः ॥५॥
प्रेम धारूँ, द्वेष मारूँ ।
ओम् नमः ओम् ओम् नमः ॥
सत्य बसाऊँ, जात कमाऊँ ।
ओम् नमः ओम् ओम् नमः ॥६॥
आतम ध्याऊँ, देह भुलाऊँ ।
ओम् नमः ओम ओम् नमः ॥
एक निहारूँ, द्वैत बिसारूँ ।
ओम् नमः ओम् ओम् नमः ॥७॥

स्थिति आवे, शान्ति समावे ।
ओम् नमः ओम् ओम् नमः ॥
दास है शरणी, दया करनी ।
ओम् नमः ओम् ओम् नमः ॥८॥

आरती ॥३॥

जय जय हेमराज प्यारा ।

सत्य धरम अवतारा,
तोहे अनेक नमस्कारा । रहाउ ॥१॥
निर्मल सत्यरूपा, पूरण चिद्सारा ।
परमातम स्वरूपा, सांचा रखवारा ॥२॥
शान्ति सुख दाता, पूरण हितकारा ।
परम शील विधाता, मेरो आधारा ॥३॥
हे मात पिता ईश्वर, तेरो मान सहारा ।
दया रखें नित मुझ पर, तन मन प्रतिपारा ॥४॥
हम अवगुण हारे, लंपट संसारा ।
तुम प्रभु बक्शन हारे, हो अति कृपारा ॥५॥
तेरी पालें आज्ञा, सतगुरु अपारा ।
नित ही राखें श्रद्धा, सेवूं चरणारा ॥६॥
जग बंधन तोड़ो, मुक्ति दातारा ।
चित्त प्रभु सें जोड़ो, राखो संभारा ॥७॥

द्वैत भेद सब जारो, रवि ज्ञान उजियारा ।
क्रोध द्वेष को मारो, धीरज भंडारा ॥८॥
भक्ति प्रेम कमाऊँ, शुद्ध हो आचारा ।
आतम में तृपताऊँ, रहूं दास तिहारा ॥९॥

—:०:—

आरती ॥४॥

श्री हेमराज जी नमो नमो ।
सत्य महाराज जी नमो नमो ॥१॥
। रहाउ ।
मेरे सतगुरु स्वामी नमो नमो ।
पूरण सत धामी नमो नमो ॥२॥
चैतन्य स्वरूपा नमो नमो ।
आनन्द घन रूपा नमो नमो ॥३॥
सत्य धर्म अवतारा नमो नमो ।
हे प्राण प्यारा नमो नमो ॥४॥
दुःखों के हर्ता नमो नमो ।
सद् रक्षा कर्ता नमो नमो ॥५॥
रवि ज्ञान चढ़ायो नमो नमो ।
अज्ञान नसायो नमो नमो ॥६॥
हे सत्य उपदेशक नमो नमो ।
पापों के छेदक नमो नमो ॥७॥

तेरा मोहन दर्शन नमो नमो ।
तेरा अमृत भाषण नमो नमो ॥८॥
तेरे शास्त्र अनूपा नमो नमो ।
वेदों के भूपा नमो नमो ॥९॥
मोह क्रोध निवारो नमो नमो ।
विषयन से टारो नमो नमो ॥१०॥
चिंता मेरी खोवो नमो नमो ।
अन्तर मल धोवो नमो नमो ॥११॥
भ्रम भेद नसावो नमो नमो ।
आतम दरसावो नमो नमो ॥१२॥
सत्य शान्ति दीजे नमो नमो ।
मन प्रेम भरीजे नमो नमो ॥१३॥
निज भक्ति लावो नमो नमो ।
मैं दास सुहावो नमो नमो ॥१४॥

आरती ॥५॥

सतगुरु पूजन को आई हैं
पुजारिन हम सगरी ॥
चावल घी काफूर गिरी सब
चोवा चंदन लाई ॥ रहाउ ॥१॥
सतगुरु स्वामी हेमराज जी

आए शरण तिहारी ।
पुजारिन हम सगरी ॥२॥
शीश निवा के विनती करत हूँ
छोऊँ शुद्ध चरनारी ।
पुजारिन हम सगरी ॥३॥
श्रद्धादान दान देवो कृपाकर
हृदय में विराजो हमारे ।
पुजारिन हम सगरी ॥४॥
सुख निध परम उदार मनोहर
मङ्गल रूप मुरारे ।
पुजारिन हम सगरी ॥५॥
दर्शन से शान्ति सुख व्यापे
हृदयंगम अति प्यारे ।
पुजारिन हम सगरी ॥६॥
अमृत वर्षा सत उपदेश सों
ताप क्लेश निवारे ।
पुजारिन हम सगरी ॥७॥
अलख अपार शोभा महिमा तव
बलिहारे बलिहारे ।
पुजारिन हम सगरी ॥८॥
प्रह्लाद पुरी के नरसिंह स्वामी

दासियों के रखवारे ।
पुजारिन हम सगरी ॥६॥

—:०:—

आरती ॥६॥

हे री सतगुर शरनी आओ री
आओ आओ खुश घड़ियाँ मनाओ री
मनाओ मनाओ मनाओ री ॥
। रहाउ ।

१- चरण कमल पर शीश निवाओ
आओ नित आओ सुहाओ सब सईआं
सुहाओ सब सईयाँ मनावो री ।

२- दर्शन पाकर कृत कृत होवो
हंसो गावो बुलाओ बधाईयाँ
बुलावो बधाईआँ मनावो री ।

३- सुन उपदेश मिटावो अहंता
अमृत पीवो तृपताओ रसभरिआँ
तृपताओ रसभरिआँ, मनावो री ।

४- सब दासी राखो श्रद्धा नित
सतगुरु सेवो, रिझावो सुख पावो
सुख पावो मेरे सईआँ, मनावो री ।

—:०:—

आरती ॥७॥

सत श्री हेमराज जी सतगुरु देव बिहारी ।
सुन बिनती हमारी ॥१॥
सुख निधि शांतिमय, पूरन हितकारी ।
सुन बिनती हमारी ॥२॥
धरते हैं शीश चरणों पर, कर बांधकर स्वामी ।
घट घट अन्तरयामी,
भक्त वत्सल दीनबंधु, आये शरण तिहारी ।
सुन बिनती हमारी ॥३॥
बढ़े तृषा सिमिर सिमिर
तेरा मंगल दर्शन अहो अमृत भाषण ।
रखो कृपा परम दाता, हे प्राण आधारा
सुन बिनती हमारी ॥४॥
अज्ञान तपन ते, तेरी कोमल
बूटिआँ सुखाई, प्रेम जल सीचों सांई ।
प्रफुल्ले शोभ तेरी सुख निधि फुलवारी
सुन बिनती हमारी ॥५॥
तुझ बिन रोवें ललकारें तेरे नन्हें
नन्हें बाल । नित उपदेश दूध डाल ।
बालक को लगे भूख तृष बारोबारी
सुन बिनती हमारी ॥६॥

लूटें आतम धन को काम आदि
तसकर, रक्षा करो ईश्वर ।
राजा बिना भय दुःख में तेरी प्रजा बिचारी
सुन बिनती हमारी ॥७॥
आराधें कर बांध कर प्रेम भक्त तिहारे
सारे, हृदय में बसो प्यारे ।
शान्ति आवे रहें नित सत आचारी
सुन बिनती हमारी ॥८॥
धन्य धन्य जगत गुरु तेरी कृपा पर बलिहार
कुरबान बार बार श्रद्धा भक्ती दीजे
दाता, खड़े दासी जन भिखारी
सुन बिनती हमारी ॥९॥

—:o:—

आरती ॥८॥

वारे जाऊँ सतगुरु स्वामी तो पर वारनारे
प्यारे हेमराज स्वामी, तो पर वारनारे
रे तो पे वारनारे
वारे जाऊँ रे सांवरिया, तो पर वारनारे ॥
॥ रहाउ ॥
१- सुन्दर प्यारा मुख परकाशे
देखत ही सब किलविख नाशे

मोहन रूप दिखा कर
तन मन हारना रे, तन मन हारना रे
तन मन वारना रे ॥ वारे जाऊँ
२- मुरली मनोहर बैन सुनाओ
बालिक जोवन वृद्ध विसमायो
शान्ति प्रेम बसाकर
अन्तर ठारना रे, अन्तर ठारना रे
अन्तर ठारना रे ॥ वारे जाऊँ
३- सत जत धीरज दया स्वरूपा
पर उपकारी महा अनूपा
सत धर्म प्रगटा कर
दुःख निवारना रे, दुःख निवारना रे
दुःख निवारना रे ॥ वारे जाऊँ
४- सत्य ज्ञान का भानु चढ़ाओ
भेद भाव का तिमिर नसायो
इक चैतन्य लखा कर
भ्रम भय जारना रे, भ्रम भय जारना रे
भ्रम भय जारना रे ॥ वारे जाऊँ
५- तृष्णा क्रोध अग्नि विसमाओ
सत्य स्वरूप में प्रेम बढ़ाओ
धन्य धन्य दास के ठाकुर

बल बल हारना रे, बल बल हारना रे
बल बल हारना रे ॥ वारे जाऊं

—:o:—

आरती ॥९॥

हे री आवो सतगुरु पास आवो री।
उन बिन मनुआ को चैन न आवे।
तरसाना, घबराना, मुरझाना, गमखाना
आवो आवो मोहन पास आवो री ॥
॥ रहाउ ॥

१- कुशल सरूपा मङ्गल रूपा
श्री हेमराज गुरु प्यारो री
उन बिन मनुआ को चैन...

२- रस भरे बैन बिन शान्ति न आवे,
मोहे मुरली मनोहर सुनावो री
उन बिन मनुआ को चैन...

३- सतगुरु बिन सब उजाड़ भासे,
मोहे कृष्ण मुरारी मिलावो री
उन बिन मनुआ को चैन न आवे

४- कंत बिना सुख सों न विहावे,
मोहि प्रभु जी की शरनी लावोरी
उन विन मनुआ को चैन...
५- दासी हृदय में बसो गुरुदेवा
बिरहा अग्नि बिसमाओ री
उन बिन मनुआ को चैन...

आरती ॥१०॥

कैसा कैसा सखी सोहे महाराज
हमरो सतगुरु स्वामी श्री हेमराज
कैसा कैसा सखी सोहे महाराज
पुष्पों का कंठा, पुष्पों का दुलड़ा
क्या ही सजे ॥ रहाउ ॥
१- अहो आनन्द स्वरूप यह तेरा
तन मन से तूँ प्यारा-हमारा जी हाँ।
जग मोहें यह नयन
दुःख खोवें तेरे बैन।
विन देखे नहीं चैन।
तेरे ए महाराज।
तेरे ए महाराज, तेरे ए महाराज
वारी वारी तुम पर वारी

हम बलिहारी दासी सारी
कैसा कैसा सखी सोहे महाराज ॥
२- अहो सत् स्वरूप यह तेरा
भ्रम झूठ का बीज है जारा-जीहाँ
तेरा अनुभव भंडार ।
तेरो परम उपकार,
तेरी महिमा अपार ।
तेरी ऐ महाराज, तेरी ऐ…
वारी वारी तुम पर वारी
हम बलिहारी दासी सारी
कैसा कैसा सखी सोहे…
३- अहो ज्योति स्वरूप यह तेरा,
कीयो जग में ज्ञान उजियारा, जीहाँ
तेरा तुरिया सिंहासन ।
तेरा अद्‌भुत यह दर्शन ।
संग शान्ति सदन ।
तेरो ऐ महाराज ।
तेरो ऐ महाराज, तेरो ऐ महाराज
वारी वारी तुम पर वारी
हम बलिहारी दासी सारी ॥
कैसा कैसा सखी सोहे…

आरती ॥११॥

नमो भगवन नमो सतगुरु ।
तेरी महिमा अलख अपार
तेरी लीला लखि न जाए ।
नमो भगवन, नमो सतगुरु ।
॥ रहाउ ॥

१-सत् श्री हेमराज स्वामी
सतगुरु पूरण अन्तरयामी ।
पुनः पुनः प्रणामी ॥
नमो भगवन, नमो सतगुरु
तेरी महिमा अलख ॥

२-तेरा ऋषि मुनि ध्यान लगावें
गन्धर्व देव यश गावें
अन्त न पावें
नमो भगवन, नमो सतगुरु
तेरी महिमा अलख अपार ॥

३-मन तन के तुम्हीं रक्षक
भव जल के तुम्हीं निस्तारक
दुःख प्रहारक ॥
नमो भगवन, नमो सतगुरु
तेरी महिमा अलख ॥

४- अनिक अज्ञानियों का भ्रम निवारयो
अनेक विकारी विषय से सुधारयो
शान्ति पसारियो
नमो भगवन, नमो सतगुरु
तेरी महिमा अलख ॥
५- चिन्ता खोयो शोक मिटाओ
भय तृष्णा अरु रोश गंवायो
सुख प्रगटायो
नमो भगवन, नमो सतगुरु
तेरी महिमा अलख ॥
६- तेरी शरण प्रभु जो जन आया
सगरे वैर विरोध भुलाया
निज तृप्ताया
नमो भगवन, नमो सतगुरु
तेरी महिमा अलख ॥
७- सम्यक सुगम उपदेश सुनाओ
मूढ़ जनों को श्रेष्ठ बनायो
भेद भुलाओ
नमो भगवन, नमो सतगुरु
तेरी महिमा अलख ॥
८- यही प्रार्थना सतगुरु प्यारे

अन्त पर्यन्त रहो संग हमारे
सद रखवारे
नमो भगवन, नमो सतगुरु
तेरी महिमा अलख ॥
९-हम अनाथ दीन पापी जन
तुम प्रभु दीनानाथ निरंजन
हो दुख भंजन
नमो भगवन, नमो सतगुरु
तेरी महिमा अलख ॥
१०-दासी जन कर बांध पुकारें
कृपा दृष्टि दीनों पर डारें
अज्ञानी निवारें
नमो भगवन, नमो सतगुरु
तेरी महिमा अलख ॥

—:o:—

आरती ॥१२॥

स्वामी को संदेश मेरा कहियो जा
जा रे जिया जा रे जा, कागा रे जा रे जा,
हंसा रे जा रे जा ॥ रहाउ ॥
१-चित्त तड़पत गुरु के दर्शन को,
उन बिन कल न पड़त,

जीआ जा जीया जा काग़ा रे जा रे जा,
हंसा रे, जा रे जा स्वामी को संदेशा, मोरा ॥

२- याद आवत मोहे गुरु की पतियाँ
देख देख लोचूँ, जीआ जा, जीआ जा
कागा रे जा रे जा, हंसा रे जा रे जा
स्वामी को संदेशा, मोरा

३- चित्त वियोग में दीन दासी की
देख दशा, जीआ जा जीआ जा
कागा रे जा रे जा, हंसा रे जा रे जा
स्वामी को संदेशा, मोरा

४- गूंजत उनके मधुरे बैना
सुन सुन मन तरसत, जीआ जा जीआ जा
कागा रे जा रे जा, हंसा रे जा रे जा
स्वामी को संदेशा, मोरा

५- चरणामृत की प्यासी सतगुरु
शांति घूँट पिला, जीआ जा जीआ जा
कागा रे जा रे जा, हंसा रे जा रे जा
स्वामी को संदेशा, मोरा

६- दुःख शूला खोया बल सारा,
सुख जीवन मेरा ला, जीआ जा जीआ जा
कागा रे जा रे जा, हंसा रे जा रे जा

७- लूटी सगरी, दीन फिरां मैं,
प्रतिपालक मेरा आ, जीआ जा जीआ जा
कागा रे जा रे जा, हंसा रे जा रे जा
८- दासी के स्वामी हेमराज जी,
अवगुण करो क्षमा, जीआ जा जीआ जा
कागा रे जा रे जा, हंसा रे जा रे जा

—:०:—

आरती ॥१३॥

१- स्वामी हेमन जी का दीदार मुबारक होवे ।
जग में प्रगटे धर्म, अवतार मुबारक होवे ॥
२- प्रार्थना रात दिवस की हुई है पूरण अब,
नारी नर में मङ्गलाचार मुबारक होवे ॥
३- कट गए दुखड़े विछोड़े जो मिला जग मोहन,
तुझको श्रद्धा गुरु भतार, मुबारक होवे ॥
४- अति कृपालु दयालु दुःख और पाप हरन,
शान्ति आनन्द का दातार, मुबारिक होवे ॥
५- हर्ष से आंसू भरे, प्रेम से लूँ लूँ बिगसी,
तेरे उपकार पे, सद बार मुबारक होवे ॥
६- ऋषि मुनि योगी तपी देवते सिद्ध संतों के,
आए महाराजाओं के सरदार मुबारक होवे ॥

७- सत्य धर्म प्रगट किया शुद्ध किया सगला व्यवहार
कर दिया गृहस्थ का सुधार, मुबारक होवे ॥
८- ज्ञान भानु उदय हुआ देखा सर्व अपना आप
उड़ गया माया का अंधकार, मुबारक होवे ॥
६- अंत पर्यन्त रहे श्रद्धा, जगतगुरु तुझ में
हमको रज स्वामी के चरनार, मुबारक होवे ॥
१०- दासीजन के अहो, अब जागे हैं अद्भुत ही भाग्य
चमके हैं हेम सुधासार मुबारक होवे ॥

—:o:—

आरती ॥१४॥ काफ़ी

मैंनूं अपनी शरनी ला सतगुरु
मेरे दुखड़े दर्द गंवा सतगुरु
॥ रहाउ ॥

१- मैंनूं तृष्णा ने लाचार कीता
लाचार ते दर दर ख़्वार कीता
चिंता ने सीना पछाड़ लीता
इस अग थीं मैंनूं बचा सतगुरु

२- सारे जग विच रुल रुल आया मैं
हुट हुट के जन्म गंवाया मैं
किते शान्ति सुख न पाया मैं

तैनूं देख निहाल होया सतगुरु
३- मैनूं द्वेष विरोध दुखांवदे हन
मोह हंगता क्रोध सतांवदे हन
विषय हड्डी हड्डी मेरी खांवदे हन
इनां दुष्टां नूं मिट्टी मिला सतगुरु
४- तेरा नाम संकट हरन है
तेरा दर्शन सब दुःख भंजन है
तेरी ओट में आशा पूरण है
मैनूं अपना दास बना सतगुरु
५- मेरे हृदय में सत प्रकाश करो
भक्ति और प्रेम का वास करो
देह जग दी भावना नास करो
यही दास दी आस पुजा सतगुरु

—:०:—

आरती ॥१५॥

मेरे कहां गए सतगुरु प्यारो री,
स्वामी हेमराज आधारो री ॥१॥
॥ रहाउ ॥
१- सत्य पिया कहां लोप हुए,
विरहूँ अग्नि तन जारयो री ॥

२- तन मन मोह कर बिचड़ गया वह,
मोहन मंगल चारो री ॥

३- सतगुरु बिन सब उजाड़ दीसे
मेरो प्रीतम कृष्ण मुरारो री ॥

४- हद हद उनकी पुकार करे है,
मेरे प्रभुजी का दरस दिखारो री ॥

५- सुन्न हुआ सुनसान जगत अब,
जीवन वृथा हमारो री ॥

६- मुरली मनोहर बिन शांति न आवे,
ढूँढ थकी जग सारो री ॥

७- धिक् धिक् जीवन वियोग का,
बिन प्राणनाथ अंधारो री ॥

८- त्राहि त्राहि श्रद्धा अब क्या हो,
सतगुरु इच्छा धारो री,
सतगुरु लाज संभारो री ॥

९- परमेश्वर स्वामी हेमराज की,
दासी हो आयु गुज़ारो री ॥
तिहिं सिमर सिमर तन हारो री,
मूल न तांहि बिसारो री ॥

आरती ॥१६॥ (कसीद)

१- हाय नयनों से हमारे
जग मोहन जाता रहा।
भव के बन में एक ही था
वृक्ष चंदन जाता रहा ॥
२- ब्रह्मवेता जिसने प्रकटाया
जगत में सत्य को।
तम अज्ञान हरन भानु
अति प्रिय त्रिभुवन जाता रहा ॥
३- सत सभा फुलवारी थी
फूली उसी की दया से।
हंस मधुरा गीत तुर्या
सिंहासन जाता रहा ॥
४- लोप ऐसा हो गया नैनों से
वह नयनों की ज्योत।
ढूँढने से अब नहीं
मिलता कवन जाता रहा ॥
५- उन्नीसों पर साठ संवत्
भादों द्वादश तिथि को।
संतों में अनमोल माणिक

प्रभु लक्षण जाता रहा ॥
६- शंकर अवतारा वशिष्ट
स्वरूप स्वामी हेमराज
व्यास सम भगवान मूरत
शुभ दर्शन जाता रहा ॥
७- ब्रह्म लोक के नाथ स्वामी
दया धर्म उपकार मय ।
राजाओं के महाराजा
मधुसूदन जाता रहा ॥
८- मङ्गल कुशल स्वरूप प्यारा
पूर्व ज्ञान विज्ञान को ।
चन्द्रमुख रवि तेज स्वामी
दुःख भंजन जाता रहा ॥
९- सबसे मिल जाता परन्तु
न्यारा रहता नभ समान ।
मानानियों का पूज्य वह
कृपा सदन जाता रहा ॥
१०- हितकारी निष्काम सत्य
मार्ग के उपदेशक गुरु ।
सत्य भाषी निवृत चित्
मधुर वचन जाता रहा ॥

११- ब्रह्म ज्ञानी उसमें शिरोमणि
था अपूर्व महात्मा ।
वृद्ध तरुण बालक सर्व जग
गुरु पूरण जाता रहा ॥
१२- ब्रह्म लोक के ईश्वर स्वामी
तेजोमय आनन्द वप ।
सत् सभा से हाय वह
अमृत भाषण जाता रहा ॥
१३- वाद तर्क और खंडन मंडन
से रहित शान्त आत्मा ।
अनुभव रूपा केसरी
सर्वोतम बन जाता रहा ॥
१४- राज सुख में संत पूर्ण
शुद्ध चित्त निर्दंभ मन ।
अर्थी याचक का वह विक्रम
बलकरण जाता रहा ॥
१५- उसके अन्तर ध्यान पर
उत्साह अलौकिक क्यों हुआ ।
सद प्रसन जीता रहा
आनन्द घन जाता रहा ॥
१६- जीवन मुक्ति के हिंडोरे

में रहा सदा झूलता ।
बन विदेही निज स्वरूप
में हो मगन जाता रहा ॥

१७-था चिदाकाशी हुआ अब
लीन चिद् आकाश में ।
मध्य में था जो भासता
प्रतिबन्ध तन जाता रहा ॥

१८-तुर्या देश का वासी सतगुरु
स्वतः देश में चल दिया ।
पञ्च भौतिक काल देश का
सब बन्धन जाता रहा ॥

१९-ब्रह्म वप थे हेमराज जी
जैसे हिम है जल स्वरूप ।
हिम पिघल फिर जल हुआ
हिम रूप तन जाता रहा ॥

२०-अपने उपदेशों से था वह
पूज्य सिन्ध और हिन्द में ।
छोड़ उनको अपने अविनाशी
सदन जाता रहा ॥

२१-चौदह भवनों में व्यापक
अन्तर्यामी हो गये ।

पूछते क्या हो वह सर्वात्म
कवन जाता रहा ॥
२२- साकी[1] अब बाकी[2] हुआ
सबके हृदय पूर्ण हुआ ।
अधिक इससे क्या खुशी
सब शोक मन जाता रहा ॥
२३- शान्ति दाता मुक्ति दाता
सत् धर्म अवतार वह ।
सर्व ऋषि मुनि योगियों का
शिरोमणि जाता रहा ॥
२४- उनसे उपदेश और अभिप्राय
उनके शास्त्रों में भरे ।
क्या हुआ नैनों परे
सतगुरु भगवन जाता रहा ॥
२५- दासी जन दर्शन हृदय में
पाता सतगुरु प्यारे का ।
आज्ञापाली हुये कृत कृत्य
दुःख रुदन जाता रहा ॥

—दास दौलतराय

(१) उर्दू फारसी कवीश्वरी में सत्य श्री स्वामी हेमराज जी का नाम भोग के स्थान पर नियत है । (२) अविनाशी ।

श्री सत्यधर्म मण्डल के प्रकाशन

परिवर्तित मूल्य सूची

१.	श्री अद्वैत		२—००
२.	श्री सिद्ध		४—००
३.	श्री शान्ति		२—५०
४.	श्री बाल रक्षा	,,	१—००
५.	श्री हरि भक्ति माला	,,	१—००
६.	सन्त दर्शन	,,	३—००
७.	आत्मानुभव का मार्ग	,,	१—००
८.	अद्वैत दर्शन	,,	०—३५
९.	अद्वैत विहार	,,	०—३५
१०.	नित्य नियम	,,	०—२०
११.	स्वामी हेमराज जी की जीवन झांकी (हिन्दी में)		०—३५
१२.	शुद्धाहार और स्वस्थ जीवन	,,	४—२५
१३.	विवेक मणि (हिन्दी-अंग्रेजी)		१—५०
१४.	सिद्धान्त-पंचक		१—५०
१५.	Essays on Vedanta (अंग्रेजी में)		३—००
१६.	Story of Mighty Soul-the life of Swami Hemraj Ji Chidakashi		४—००
१७.	The Master speaks or the words of wisdom	,,	०—४०
१८.	Code of Morals (English)		०—५०
१९.	ज्ञान-यात्रा		२—००
२०.	चिदाकाशी मिशन	(सिन्धी में)	०—८०
२१.	विवेक मणि	(सिन्धी-उर्दू)	०—५०
२२.	नक्शा कानूने जिन्दगी	(उर्दू में)	०—८०

प्राप्ति स्थान—

१—श्री सत्यधर्म मन्दिर, स्वामी हेमराज मिशन मार्ग,
७/५ पूर्वी पटेल नगर, नई दिल्ली-८

२—१५४२, दरियागंज समीप पटौदी हाउस, दिल्ली-६

३—स्वामी परमानन्द चिदाकाशी आश्रम, पञ्चकुण्ड,
पुष्कर (अजमेर)